युगसेतु

वर्ष : 2 अंक : 16 सितंबर, 2012

संपादक
ओम प्रकाश शर्मा

संपादकीय सहयोग
उमेश प्रसाद सिंह
राजू कुमार
रमेश नारायण

विज्ञापन प्रबंधक
अमरेश कुमार पाण्डेय

प्रचार/प्रसार
नरेन्द्र कुमार सिंह

कार्यालय
जी-21, प्रथम तल, लक्ष्मी नगर,
दिल्ली-110092
दूरभाष-011-22040692

संपर्क
एन-33, भूतल, लक्ष्मी नगर,
दिल्ली-110092
दूरभाष-9013379808, 9650914297
वेब साइटः www.yugsetu.com
ई.मेल : yugsetu@gmail.com

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक और संपादक डॉ. ओम प्रकाश शर्मा द्वारा, जी 21, लक्ष्मी नगर, दिल्ली-92 से प्रकाशित एवं ग्राफिक प्रिंट बी-77, गणेश नगर, पाण्डव नगर काम्प्लेक्स, दिल्ली-92 से मुद्रित।

इस माह

लोकमंच		4
संपादकीय		6
त्योहार संस्कृति		
पूर्ण पुरुष श्रीकृष्ण	सुप्रकाश	8
स्वतंत्रता पर विशेष		
मुकम्मल आजादी का मतलब	उमेश कुमार	11
यह भी सच है	उमेश प्रसाद सिंह	13
पर्यावरण		
पर्यावरण को स्वच्छ बनाने की जिम्मेवारी	गीता सिंह	15
भारतीय साहित्य में पर्यावरण	सुधांशु चतुर्वेदी	17
प्रकृति को नुकसान पहुँचाने का असर	तुषार कांत	22
मानस में पर्यावरण	रंजन कुमार	23
पीपल, थिपाचा व नीम के औषधीय गुण	ज्योत्स्ना	24
लोक-परलोक		
गंगा स्नान	आचार्य श्रीराम शर्मा	25
लघुता ही विराट है	शिव कुमार तिवारी	27
पुरातत्त्व		
प्राचीन सिक्कों पर नारी आकृतियाँ	संतोष कुमार वाजपेयी	28
कविताएँ		
क्यों पर्यावरण विनाशमुखी?	रामगोपाल 'दिनेश'	30
एवं अन्य	व अन्य	
कहानी		
एक झोंका सुगंध का	सुषमा सिंह	32
पहला दिन	रघुनन्दन प्रसाद तिवारी	34
अनुस्मरण		
कल क्या हो किसने जाना?	शाहिद रहीम	36
भोगवादी संस्कृति		
पनपती बाजारवादी संस्कृति	आर.पी. तिवारी	37
खेती-बाड़ी		
किसानों को बर्बाद कर रहा कीटनाशक	नरेन्द्र सिंह	38
यादें		
हिन्दी सेवी महेश्वर	सुधांशु प्रकाश	40
विचार-दृष्टि		
महिला लेखन : दिशा व दृष्टि	ओम प्रकाश शर्मा	41
तुलसी में हैं उपचार के आश्चर्यजनक गुण	रमेश नारायण	46
समाचार संसार		
महिला सशक्तीकरण पर एक रिपोर्ट	शादाब शाहिद	47
विविध		50

कुल पृष्ठ आवरण सहित 52

युग सेतु में लेखकों के प्रकाशित आलेखों के विचारों से संपादक या प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद का निबटारा दिल्ली न्यायालय में होगा।

लोक मंच

गरीबी का पैमाना एक हो

जिस देश में 9 हजार रुपये मासिक आमदनी वाला आदमी भी अमीर माना जाता हो, वहीं 90 हजार मासिक आय वाले पारसियों को गरीब मानना कहाँ का न्याय है? भारत में तीस प्रतिशत लोग तो आज भी गरीबी रेखा के भीतर हैं। उन्हें भोजन, वस्त्र, आवास जैसी सुविधाएँ भी उपलब्ध नहीं हैं। भारत में अल्पसंख्यकों को जिस विशेष दर्जे में रखने की बात होती है, वह उसे मूल धारा से जुड़ने नहीं देती। यह अलग बात है कि अन्य अल्पसंख्यक वर्गों की तरह पारसियों की आबादी तेजी से नहीं बढ़ रही है, बल्कि दिनोंदिन घटती ही जा रही है। यह चिंताजनक है, शायद इसीलिए ये अपनी बनाई गरीबी-अमीरी रेखा का अपने स्तर पर अनुपालन कर पाते हैं; परंतु सरकार के लिए यह कतई संभव नहीं कि वह विभिन्न वर्गों-समुदायों के लिए गरीबी का अलग-अलग पैमाना निर्धारित करे। हालाँकि आरक्षण की व्यवस्था से गरीबी का अलग-अलग पैमाना व्यवहार में है। अमीर पिछड़े-दलित आरक्षण के कारण उन सुविधाओं को प्राप्त कर लेते हैं जो उनसे बेहद गरीब अगड़ों को सिर्फ अगड़ा कहे जाने के कारण नहीं मिल पाता या मिल ही नहीं सकता। करोड़ों की आबादी में हजारों की संख्या वालों अल्पसंख्यक को उनकी भाषा-संस्कृति के फूलने-फलने के लिए उचित संरक्षण देना अनुचित नहीं है। इससे विविधता में एकता का भाव परिपुष्ट होगा।

मयंक शर्मा, जयपुर, राजस्थान

भावोद्‌गार की विशेष आभा

यह खबर पढ़कर अच्छा लगा कि हैदराबाद में कादम्बिनी क्लब की बैठक में युगसेतु के ताजे तीन अंकों पर परिचर्चा हुई। परिचर्चा से पत्रिका के बारे में अनेक विद्वत-जनों के विचारों से अवगत होने का अवसर मिलता है और आम पाठकों तक पत्रिका की सामग्री का संचार होता है। पूरे देश में 'युगसेतु' पर इसी तरह के कार्यक्रम करने की आवश्यकता है ताकि पत्रिका के दृष्टिकोण से आमजनों को परिचित कराया जा सके। यह विचार सुकूनदायक है कि 'युगसेतु' लीक से हटकर अपना चेहरा सामने रख रही है, जहाँ प्रेरणा व संदेश युग चेतना के मुख्य वाहक बन सके हैं। इससे विचारों, भावों, संस्कारों की परिपुष्टि होती है। इसीलिए पत्रिका के प्रकाशित होते हुए अभी डेढ़ वर्ष भी नहीं हुए हैं; परंतु इस अल्पावधि में ही यह हिन्दी पाठकों के बीच अपनी पठनीयता व संग्रहणीयता के कारण विशेष आभा बिखेर रही है। अब हर महीने के आरंभ में इस पत्रिका का बेसब्री से इंतजार रहता है कि नये अंक में कौन-सा भावोद्‌गार होगा और कौन-सी अतृप्त अनजानी जिज्ञासा शांत होगी।

समीक्षा, देहरादून, उत्तराखंड

घोर जातिवादी भी सेक्यूलर हैं

सेक्यूलरिज्म शब्द का इस्तेमाल भारतीय राजनीति में सकारात्मक और नकारात्मक दोनों रूपों में होता रहता है। वैसे तो इसे 'सर्वधर्म समभाव' यानी सभी धर्मों के प्रति समान आदर-भाव के रूप में देखा जाता है; परंतु व्यक्ति सिर्फ धर्म के प्रति आदर भाव ही नहीं रखता, वरन् कुछ न कुछ उसका पालन भी करता है। इसके लिए उसे स्वयं को परंपरा से किसी-न-किसी बने-बनाए मत, संप्रदाय, धर्म के भीतर रखना पड़ता है और अन्य संप्रदायों-धर्मों से एक दूरी चाहे-अनचाहे रखनी पड़ती है। मानव धर्म का सर्वग्राही रूप आज कहाँ उपलब्ध है, आदर्श मानव संहिता को कहाँ पल्लवित पुष्पित होने दिया गया है?

सेक्यूलर तो वही हो सकता है जो आदर्श मानव संहिता में विश्वास रखता हो; परंतु अपने यहाँ इसे धर्म-संस्कृति की बजाय राजनीति में वोट बैंक के लिए अधिक इस्तेमाल किया गया है। स्थिति यहाँ तक बन गई है कि घोर जातिवादी-सांप्रदायवादी व क्षेत्रवादी नेता भी अपने को जन्मजात सेक्यूलर के रूप में स्थापित करने से नहीं चूकते। जो जाति, लिंग, क्षेत्र, भाषा की अपेक्षाकृत छोटी सोच से आजन्म ऊपर नहीं उठ पाया, वह घोषित रूप से अपने को धर्म-संप्रदाय से ऊपर उठा हुआ बताता है। यह विरोधाभास है, इसलिए देश में धर्म के नाम सांप्रदायिक दंगों की घटनाएँ होती रहती हैं, जिनमें सेक्यूलर व सांप्रदायिक दोनों नेताओं का पूरा योगदान रहता है। ऐसे में कोई 'मौत का सौदागर' बनता है तो कोई 'सेक्यूलरिज्म का सौदागर।' श्री जगमोहन सिंह राजपूत ने यह ठीक ही लिखा है कि वर्तमान भ्रष्ट राजनीति व जातीयता मानवीय मूल्यों के ह्रास का कारण है, जिसने क्षुद्र स्वार्थवश पूरे वातावरण को विषाक्त बना दिया है। जो लोग अपने को सेक्यूलर कहना-कहलाना पसंद करते हैं, मगर प्रछन्न रूप से सांप्रदायिक दुर्भावना बढ़ाते हैं, वे अपनी स्वार्थ-सिद्धि में तो सफल हो जाते हैं, परंतु व्यापक स्तर पर देश का अहित ही करते हैं। असल में भारत की वर्तमान राजनीति और उसकी पूरी प्रक्रिया उच्च राष्ट्रीय मानवीय मूल्यों की बजाय तिकड़म से कुर्सी हथियाने, चुनावी लाभालाभ व चाहे कैसे भी हो, पद, पैसा, वैभव पाने तक सीमित होकर रह गई है। ऐसे में आदर्शों को विकृत बनाकर उनका सौदा करने का काम चल रहा है तो इसमें आश्चर्य कैसा?

गोपीलाल सिंह, बाराबंकी, उ.प्र.

अनछुए प्रसंगों का स्पर्श

साहित्यकारों के जीवन के अनछुए पहलुओं को उजागर करने वाला आलेख सुबोध, पठनीय व रोचकता से परिपूर्ण है। चाहे अज्ञेय के मुँह पर ही चाचा द्वारा दो हाथ लगाने की बात हो या दिनकर का क्रोध में आकर पंडों से

लड़ना-झगड़ना अथवा मिर्जा का यह कहना कि 'सरकारी नौकरी का विचार तो सम्मान के लिए किया था। इज्जत कम कर देने वाली नौकरी की मुझे आवश्यकता नहीं है।' बात चाहे कालिदास व उनकी मालिन की हो या फिर महादेवी और उनके भ्रातृ तुल्य निराला की, ये ऐसे प्रसंग हैं, जिनसे इनके बारे में और-अि धक जानने का मन करता है।

अभिराम सिंह, छपरा, बिहार

प्रेम में पछतावा लाजिमी

आपने अपने संपादकीय में प्रेम में पछतावा को व्यक्ति व समुदाय के लिए सबसे बड़ा दुर्भाग्य कहा है। परंतु यह सच है कि घृणा व नफरत में जितना पश्चाताप नहीं होता, उससे अधिक प्रेम में पछताना पड़ता है। वस्तुतः प्रेम भाव ही ऐसा है जो जितना अपने पर निर्भर है, उतना ही दूसरों पर भी और जरूरी नहीं कि दूसरे भी प्रेम की कसौटी पर खरे ही उतरें।

कहने को तो अपने यहाँ घोषित रूप से लोकतंत्र है, लेकिन कई बार कम से कम व्यक्तिगत स्तर पर तो यही लगता है कि लोकतंत्र नहीं है, क्योंकि राजतंत्रीय शासन प्रणाली में कम से कम समस्याओं और उसके समाधान में कुछ लोग तो जिम्मेदार होते थे, लेकिन इस लोकतंत्र में हर स्तर पर समस्या पैदा करने वाले तो अनेक हैं; परंतु जिम्मेदार कोई नहीं। सब एक-दूसरे पर टालकर समस्याओं की अनदेखी करते हैं। फलतः समाधान दूर, समस्याएँ ही अधिक बढ़ती जाती हैं।

निशांत केतु, गाजियाबाद, उ.प्र.

राष्ट्रविरोधियों-मानवताविरोधियों का हाथ

मैं युगसेतु का नियमित पाठक हूँ। यह पढ़कर अति दुख हुआ कि इतनी अच्छी पत्रिका का संपादक होते हुए भी आप पर कई बार हमले किए गए, जिनकी शिकायतें आप निचले स्तर से लेकर उच्च स्तर तक दर्ज करवाते रहे हैं। तीन-चार महीने पहले भी आपने अपने प्राध्यापक की नौकरी के दिनों की आपबीती 'महिला महाविद्यालय में अध्यापन के पाँच वर्ष' शीर्षक से प्रकाशित की थी, उसे पढ़ने का मौका मिला। आज भी जब ज्यादा सामाजिक-सरकारी शोर सुनाई देती है, तो उसे पढ़ लेता हूँ, तब डपोरशंखों की काली करतूतों का पता चलता है। आखिर ये लोग क्या चाहते हैं, इन्हें फंड कौन मुहैया कराता है कि किराये के अपराधियों से लेकर शासन-प्रशासन के लोगों को खरीद लेते हैं, जिससे प्रशासन अपना कार्य नहीं कर पाता। इसमें विदेशी या राष्ट्रविरोधी शक्तियों का हाथ तो नहीं है? जब इसका मुखर प्रतिवाद किया जाता है तो ये 'प्रतिवाद' तो सुन-देखकर उस पर अपने निजी कानून के हिसाब से क्रियाशीलता प्रदर्शित करते हैं, पर मूल वाद पर आँखें बंद किए रहते हैं।

आखिर क्या कारण है कि चाहे भारत का न्यायालय हो या राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग अथवा प्रधानमंत्री कार्यालय हो या गृह मंत्रालय अथवा भारत के राजनीतिक दल व उसके नेता, क्यों अध्ययन-अध्यापन, अर्थोपार्जन या पत्र संपादन की बजाय आपको आपकी नितांत निजी मामलों में उलझाकर ही फाँसना चाहते रहे हैं? पुलिस प्रशासन व कॉरपोरेट व कुछ जाति विशेष के शिरोमणियों से मिलकर उन निजी मामलों को ढँकने का प्रयास करते हैं, जिनमें उनकी मिलीभगत है।

आखिर नौकरी से इस्तीफा देने के पौने चार साल बाद भी आपकी बकाया राशि का भुगतान क्यों नहीं कराया गया, आपकी फोन टेपिंग क्यों की जाती रही है, नितांत निजी संबंधों को तोड़ने का कुचाल क्यों रचा जाता रहा है और आपकी प्रगति और विकास को क्यों नौकरी के शुरुआती दिनों से अवरूद्ध किया गया है? क्यों बार-बार शिकायत करने पर भी कार्रवाई नहीं होती, उल्टे आपको फाँसने के लिए तरह-तरह के हथकंडे व षड्यंत्र किए जाते रहे हैं।

निश्चित रूप से आप इतने बड़े नहीं थे कि ये लोग इतना सब करें-कराएँ, लेकिन अब लगता है कि आपको आपके असली मुद्दों से हटाकर किसी और मुद्दे पर फाँसने का कुचक्र रचा जा रहा है, बेशक एक जाति विशेष वालों ने दूसरी जाति विशेष वालों व प्रशासन के साथ मिलकर ऐसी साजिश का ताना-बाना बुना हो; परंतु निस्संदेह इसके पीछे राष्ट्रद्रोही ताकतों का हाथ है, अन्यथा क्या कारण है कि आप जैसे कर्मठ, सुयोग्य व ईमानदार अध्यापक जो भारतीय ही नहीं, वैश्विक मानव मूल्यों का अध्येता व तदनुरूप चरित्रवान है, उसे फाँसने, गिराने के लिए षड्यंत्र किए जाएँ और सारी सुविधाएँ रोक ली जाएँ। इसलिए सारे मामलों की जाँच निष्पक्ष राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय एजेंसी से करवाई जाए, तभी यह रहस्य खुलेगा कि घेरेबंदी करने वाले और बाद में पारिवारिक से लेकर सामाजिक स्तर तक विष-बेल पैदा करने वाला कौन है?

राजन कुमार, उत्तम नगर, दिल्ली

विशिष्ट क्षेत्र में ही सेवा ठीक

भारत में एक फैशन बन गया है कि किसी भी क्षेत्र की कोई नामचीन हस्ती हो, वह जब अपने प्रदर्शन के पूरे सबाब पर होता है तो उसे फिल्मी दुनिया से ऑफर मिलते हैं। वहाँ की ग्लैमर व चकाचौंध से वह खुद भी मुग्ध हो जाता है, फलतः उधर खिंच जाता है। इससे वह क्षेत्र अधूरा रह जाता है, जहाँ उसका पूर्ण प्रदर्शन अभी होना था। ठीक इसी प्रकार डॉक्टरी-इंजीनियरी पढ़ने वाले संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षा में बैठकर अच्छा प्रदर्शन कर लेते हैं।

ये अपने व्यावसायिक पाठ्यक्रम में निष्णात होते हैं, फलतः इस प्रतियोगिता में भी इनका प्रदर्शन अव्वल रहता है जो बाकी प्रतिभागियों के साथ अन्याय है। खुद डॉक्टरी या इंजीनियरी का पेशा अपने आप में प्रशासनिक अधिकारियों से कमतर नहीं, बल्कि कई मायने में बेहतर है, फिर भी प्रशासनिक अधिकारी बनने की ललक ये छोड़ नहीं पाते - शायद इसके पीछे पद, पैसा व रुतबे की माँग होती है। एक डॉक्टर, इंजीनियर बनाने में परिवार से लेकर सरकार तक के लाखों रुपये खर्च होते हैं और जिंदगी के महत्त्वपूर्ण पाँच-सात साल भी, तब एक अच्छा पेशवर तैयार होता है। जब वह प्रशासन के क्षेत्र में जाता है, वहाँ असकी पेशेवर योग्यता धीरे-धीरे खत्म हो जाती है, फलतः देश की विशेष ऊर्जा नष्ट होती है। अतः इस पर अंकुश लगाया जाना चाहिए।

विभूति पटेल, मुम्बई, महाराष्ट्र

पाठकगण

पत्रिका के संबंध में किसी भी तरह के सुझाव, विचार, प्रतिक्रिया आदि दूरभाष और ईमेल आईडी पर भी भेज सकते हैं। युग सेतु के पिछले अंकों को वेबसाइट www.yugsetu.com पर भी देखा जा सकता है।

संपादक

सत्यांश

पर्यावरण अब वैश्विक चिंता का विषय है। ज्ञान-विज्ञान में प्रगति के तमाम दावों-प्रतिदावों के बावजूद आज भी हम अधिकतर चिन्त्य विषयों की ओर ध्यान ही तब देते हैं, जब उनका विपरीत प्रभाव नजर आने लगता है। फिर यह तो ध्यान देने की बात है, समाधानस्वरूप कार्य तो बहुत सारे महत्त्वपूर्ण मसलों पर कभी करते ही नहीं। पानी सिर से ऊपर बहने लगता है, प्रतिगामी प्रभावों से सब कुछ त्राहि-त्राहि और तहस-नहस हो जाता है; परंतु जिम्मेदार पक्ष गैर-जिम्मेवारी का चरम प्रदर्शन करते हुए हाथ पर हाथ धरे बैठे रहते हैं, या यों कहें कि ये सज्जन इन्हीं बुराइयों में जीने-खुश रहने के आदि-अभ्यस्त होते हैं। पर्यावरण की चिंता में निकल रहे इस अंक की तैयारी के दरम्यान ही देश के अनेक भाग भयावह बाढ़ की चपेट में आ गए हैं। कल तक जहाँ सूखा पड़ा था, वहीं आज बाढ़ की विकट स्थिति है, यद्यपि अनेक स्थान आज भी सूखाग्रस्त हैं। यह हाल केवल अपने यहाँ का नहीं है, वरन् पूरा विश्व इस प्रकार के आसन्न संकटों से जूझ रहा है।

जलवायु संकट और मौसम परिवर्तन आज की दुनिया की दैनंदिन की समस्या है। भारत से लेकर अफ्रीका तक कम बारिश के चलते सूखे की स्थिति उत्पन्न हो गई है। अमेरिका का एक-चौथाई भाग सूखे की चपेट है। सन् 2008 के अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव में भी जलवायु संकट एक प्रमुख मुद्दा था, हालाँकि जहरीली गैस कार्बन उत्सर्जन के मामले में अमेरिका अव्वल है। लेकिन हथियार, वाहन एवं तेल बनाने वाली कंपनियों के दबाव के कारण ऐसे गंभीर मुद्दे पर उपाय हेतु अमल नहीं होता। इधर विकासशील देशों में जहाँ रोटी, कपड़ा, मकान, रोजगार आदि बुनियादी चीजों के ही लाले पड़े हैं, वहाँ पर्यावरण की चिंता कोष को पाने और रस्म अदायगी के सिवा हो भी क्या सकता है? अपने यहाँ सूखा-सूखा रटते-रटते एकाएक आई बारिश की बाढ़ के कारण सैकड़ों जानें पिछले एका-आध हफ्ते में ही चली गई हैं। नामी-गिरामी शहर व महानगरों की दशा और तैयारी की पोल भी इस बारिश के कारण खुल गई है। मुम्बई, दिल्ली, जयपुर, जबलपुर, दौसा, सीकर, पटना आदि शहरों में बाढ़ के पानी से हुई तबाही सुर्खियों में है। ऐसा नहीं कि यह अचानक हो गया है, वरन् देश-विदेश में सूखे और बाढ़ आती ही रही है। इसके पीछे अतिवृष्टि-अनावृष्टि जैसे प्राकृतिक कारक तो उत्तरदायी हैं ही, मानव की अपनी असावधानी, बेपरवाही भी कम जिम्मेदार नहीं है जिसके कारण बरसों से हर वर्ष इस तरह की तबाही होती है।

संयुक्त राष्ट्र की ओर से भी इस बार सभी देशों से सम्मिलित प्रयास करने के लिए अपील की गई है ताकि जलवायु संकट के बुरे प्रभाव से बचकर खाद्य सुरक्षा की गारंटी तय की जा सके। इस संकट का असर खाद्य के अलावे पानी और ऊर्जा क्षेत्रों पर भी होता है। विश्व मौसम विज्ञान संगठन (डब्ल्यू.एम.ओ.) की ओर से जारी रिपोर्ट में बार-बार सूखा पड़ने, उसकी तीव्रता बढ़ने एवं काल-सीमा विस्तारित होने की चेतावनी दी गई है। अकेले भारत में ही इस बार सामान्य से बीस फीसदी कम बारिश हुई है जो सूखे की स्थिति उत्पन्न करने की न्यूनतम सीमा से दुगुनी है। इसलिए अगले साल मार्च में जेनेवा में 'अंतर्राष्ट्रीय सूखा नीति' पर एक उच्च स्तरीय सम्मेलन का आयोजन तय हुआ है। 'हरियाली' का स्वप्न अब 'हरित अर्थव्यवस्था' तक पहुँच चुका है। परंतु यह तो बाढ़ और सूखे की स्थिति है। तापमान में निरंतर वृद्धि, बर्फ का लगातार पिघलना, बादल फटना, जमीन खिसकना, भूकंप, चक्रवात, सूनामी आदि अनेक ऐसे प्राकृतिक प्रकोप हैं जो पर्यावरण व प्रकृति से असंतुलित व्यवहार व छेड़-छाड़ के कारण अपनी भयावहता दिखाते हैं और इंसान व उसका विज्ञान ज्यादा कुछ समय रहते नहीं कर पाता। वस्तुतः जिम्मेदार भी तो वही है। अंधाधुंध विकास के सोपानों पर चढ़ने की जल्दी एवं बढ़ती आबादी की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए यह सब हो रहा है। तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दीर्घकालिक-दूरंदेशी जरूरतों की बलि चढ़ायी जा रही है। इसके सिवा कोई दूसरा उपाय भी तो नहीं सूझ रहा है!

यों अच्छे का अच्छा, बुरे का बुरा होना प्रकृति का सामान्य सिद्धांत और ऋषि का आप्त वचन माना जाता है, फिर भी अच्छे का अच्छा परिणाम हो ही, यह निश्चित नहीं है और न ऐसा सदैव के लिए बताया गया है। जब संतुलित का संतुलित परिणाम ही तय नहीं, तो फिर असंतुलन-असामंजस्य के संतुलित समन्वित प्रभाव की अपेक्षा क्यों? इसलिए जीवन-जगत, जीव-जंतु, पेड़-पौधे, नदी-जलाशय, पर्वत-जंगल आदि के बीच संतुलित स्थिति व सामंजस्य-समन्वय आवश्यक है। ये सब एक-दूसरे के पूरक हैं, क्योंकि परस्पर आश्रित हैं, एक के बिना दूसरे की उन्नति का स्वप्न अवनति की ही कल्पना है। एक की कीमत पर अन्यों की वास्तविक प्रगति संभव ही नहीं है, लेकिन आज स्थिति ही ऐसी बन चुकी है कि समुदायों-प्रजातियों का अन्य समुदायों-प्रजातियों से अधिक, आपसी वैमनस्य बढ़ा है। दूसरे की कीमत पर अपना विकास क्या, खुद की परवाह किए बिना खुद की कीमत पर स्वयं का विकास-सोपान चढ़ा जा रहा है, जो कितना बेजड़-निर्मूल होगा, इसका आकलन अपेक्षित है। सब कुछ ठीक होने पर भी प्राचीन ज्ञान-ग्रंथों में प्रलय जैसे समूल नष्ट होने वाले दृश्य की परिकल्पना सदियों पुरानी है, फिर किसी भी क्षेत्र में 'अति' तो नाश की निर्मिति है ही, चाहे वह रामबाण दवा या अमृत ही क्यों न हो। अमृत-दवा भी अति क्या, मात्रा से ज्यादा विष हैं ही। इसलिए 'अति सर्वत्र वर्जयेत्' की तर्ज पर रहीम कवि कहते हैं-

अति का भला न बोलना, अति की भली न चुप।
अति का भला न बरसना, अति की भली न धूप।।

पर आज अति ही अति है। कहीं कम बारिश के कारण सूखा है, तो कहीं अत्यधिक वर्षा के कारण बाढ़ का भीषण प्रभाव। इसलिए आवश्यक है कि प्रकृति व उसके अवयवों- जीव-जंतुओं, पेड़-पौधों, नदी-पर्वतों के प्रति भौतिक जरूरतों के बजाय आत्मिक-आत्मीय रिश्ते बनाए जाएँ और उनका समुचित विकास किया जाए। जितनी जरूरत हो, उतना ही उनसे प्राप्त करने का प्रयास हो। चर-अचर प्रत्येक पदार्थ को सचेतन मानकर उनसे एक आंतरिक लयात्मक संबंध स्थापित करें। इससे हमारा भौतिक उन्नयन भी होगा और आत्मिक विकास भी। यह सब धर्मों का सार और आध्यात्मिक विकास का भी चरम प्रकर्ष है। यही प्रकृति व पर्यावरण की असली चिंतना भी है और उसका सही समाधान भी और आत्मिक परितोष एवं मनुष्यता के विकास का उच्च मानदंड भी।

प्राकृतिक वातावरण-पर्यावरण से यह सूक्ष्म संबंध थोड़ी दूरी का है, एक नितांत स्थूल व स्पष्ट पर्यावरणीय वाइब्रेशन तो हम खुद निर्मित करते हैं दैनिक कार्य-कलापों, व्यवहारों व वचनों से। व्यक्तिगत से लेकर सामाजिक और आर्थिक से लेकर राजनीतिक सहित सभी स्तरों पर जो वातावरण तैयार होता है, वह पूरे प्राकृतिक-पर्यावरणीय वाइब्रेशन को प्रभावित करता है। कहना न होगा कि इस दृष्टि से आज का माहौल कैसा है? हम सब इससे भलीभाँति अवगत ही नहीं, इसके भुक्तभोगी भी हैं। घर से लेकर कार्यालयों तक और बाजार से लेकर कामकाज तक आज वातावरण ऐसा निर्मित हो गया है कि कब कहाँ क्या हो जाए- पता नहीं। हमने दुराचार, अनैतिकता, भ्रष्टाचार, अपराध आदि को अनौपचारिक सदाचरण मान लिया है। किसी भी तरह मिली सफलता सारी बुराइयों को ढँकने के लिए काफी है। कहने को तो यह सब प्रगति व विकास के लिए हुआ है, परंतु यह नैतिक अवमूल्यन है जिसने पूरे सामाजिक व मानवीय मूल्यों को जकड़कर तोड़ दिया है। पूरा माहौल इस कदर दूषित हो चुका है कि लोग इसमें ही रहने के अभ्यस्त हो गए हैं।

संसद में इस समय कोयला आवंटन में गड़बड़ी की शिकायत के कारण कामकाज ठप है, बाढ़ व सूखे की कहर के साथ पुणे में बम विस्फोट, असम व महाराष्ट्र में दंगे व उसकी प्रतिक्रिया, पाकिस्तान से आए एमएमएस और ट्विटर की अन्य घृणास्पद सामग्री, कालेधन व भ्रष्टाचार को लेकर स्वामी रामदेव व अन्ना हजारे के नेतृत्व में चले अनशन-आंदोलन के साथ नया दल बनाने की घोषणा, केन्द्रीय मंत्री बेनी प्रसाद वर्मा का महँगाई पर खुश होने वाला बयान, गुजरात में केशुभाई पेटल के नेतृत्व में भाजपा से अलग होकर नई पार्टी का गठन, अगले लोकसभा चुनाव में किसी को बहुमत न मिलने की आडवाणी जी की भविष्यवाणी आदि घटनाक्रमों ने राजनीतिक माहौल को अच्छे कम, बुरे अधिक गरमाया है। इस प्रकार देश सामाजिक, राजनीतिक स्तर पर 'दूषण' व इस पर चिल्लाहट का शिकार है, यानी प्राकृतिक पर्यावरण के साथ राजनीतिक व सामाजिक पर्यावरण का संकट विद्यमान है, जिसका असर व्यक्ति-व्यक्ति पर होना अवश्यंभावी है और हो रहा है। वैयक्तिक व पारिवारिक मूल्य पहले से ही वि ाटन के कगार पर हैं, फलतः अच्छे मन-मानस वाले व्यक्ति व समाज का निर्माण नामुमकिन होता जा रहा है, और जब व्यक्ति व समाज दूषित-प्रदूषित होगा तो राष्ट्र और विश्व कैसा बनेगा, लोकतांत्रिक मानवीय संस्थाओं का क्या हाल होगा और है- इसका आकलन मुश्किल नहीं है। यह सर्वत्र दिखाई भी दे रहा है।

अब इसे संयोग कहा जाए या आंतरिक लय-योग कि एक साथ प्राकृतिक पर्यावरण व सामाजिक-राजनीतिक वातावरण असंतुलन व दूषण का शिकार है और यह देखना शोध का विषय है कि एक का प्रभाव दूसरे पर कितना कहाँ, कैसे कब हो रहा है। पर यह तय बात है कि सब आंतरिक लय में अविच्छिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। इसलिए पर्यावरण की किसी भी चिंता में व्यक्ति, समाज व प्रकृति के मन-मानस की लयात्मकता को समझना-परखना आवश्यक है, तभी इस पर पूर्ण चिंतन संभव होगा। समेकित, समग्र व संतुलित विकास योजनाओं का कार्यान्वयन ही इसका मूलाधार होगा।

जन्माष्टमी एवं स्वतंत्रता दिवस के उपरांत इस महीने अब शिक्षक दिवस व हिन्दी दिवस मनाया जाएगा। कुछ भी हो, हम इन दिवसों पर कम से कम संबंधित पक्षों के आदर्शों को कुछ मात्रा में याद कर ही लेते हैं। आशा है कि इस बार के ये दिवस हिंदी व शिक्षकों को लेकर बैठी रही हीनता व दीनता के भाव को कम करने में कुछ उत्प्रेरक का काम करेगा, क्योंकि कम से कम राष्ट्र के भीतर हिन्दी भाषा व संस्कृति के उत्थान के बिना वास्तविक प्रगति की बात सोचना और भारतीय मूल्यों को स्थापित करने को कार्यरूप देना असंभव है। यह काम शिक्षकगण कर सकते हैं और यदि शिक्षक हिन्दी का हो तो क्या कहना।

पिछले दिनों दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी माध्यम छात्रों के अधिक संख्या में वह भी कला-विषयों में, अनुर्तीण-असफल होने का कारण भी अंग्रेजी मानसिकता है, जहाँ अंग्रेजी की गाली भी अच्छी लगती है, पर हिन्दी के उत्तम भाव विचार नहीं। अब समय की यही मांग है कि न तो शिक्षक का पेशा-मिशन व हिन्दी भाषा एवं संस्कृति दीन-हीन रहे, और न मजबूरी का काम रहे। इसलिए ऐसे लोग शिक्षक पेशे से जुड़ें जो अपने विषय में किसी भी अन्य व्यवसाय-नौकरी यहाँ तक कि डॉक्टरी, इंजीनियरिंग, प्रशासनिक सेवा से भी अव्वल हों। इसके लिए इन्हें सर्वोच्च मनोवैज्ञानिक, सामाजिक व आर्थिक सुविधाओं से लैस करना होगा, तभी इस पेशे के प्रति रुचि बढ़ेगी और मेधावी लोग इसमें आएँगे, क्योंकि शिक्षक का काम मेधावी ही कर सकते हैं। पर स्थिति इतनी विकट है कि एक चपरासी से भी कम वेतन पर शिक्षक बड़े पैमाने पर रखे गए हैं और रखे जा रहे हैं। ऐसे में शिक्षक व शिक्षा कैसी होगी, उसका स्तर क्या होगा, बच्चों का भविष्य कैसा बनेगा- यह शोचनीय है। हिन्दी को भी प्रशासनिक अधिकारियों व सरकारी मकड़जाल से निकालकर सहज रूप में प्रतिष्ठित करना होगा। इस प्रकार शिक्षक व हिन्दी का विकास, योग्यता की कदर करते हुए प्रबंधनों-प्रशासनों की हेठी-शेखी-अकर्मण्यता व भ्रष्टाचार से निकल स्वयं खड़े होकर विकसित करके होगा, तभी व्यक्ति व समाज व उसकी भाषा, सोच व संस्कृति का पर्यावरण प्रदूषणमुक्त व चेतनशील होगा।

पूर्ण पुरुष श्री कृष्ण

❐ सुप्रकाश

भगवान ने देखा कि संपूर्ण विश्व शून्यमय है। कहीं कोई जीव-जन्तु नहीं है। जल का भी कहीं पता नहीं है। संपूर्ण आकाश वायु से रहित और अंधकार से आवृत्त प्रतीत हो रहा है। वृक्ष, पर्वत और समुद्र आदि शून्य के कारण विकृताकार जान पड़ते हैं। मूर्ति, धातु, शस्य तथा तृण का सर्वथा अभाव हो गया है। इस प्रकार जगत् को शून्य अवस्था में देख किसी सहायक से रहित एकमात्र स्वेच्छामय प्रभु ने स्वेच्छा से ही इस सृष्टि की रचना प्रारंभ की। सर्वप्रथम उन परम पुरुष श्रीकृष्ण के दक्षिण पार्श्व से जगत् के कारण रूप तीन मूर्तिमान गुण प्रकट हुए। फिर पाँच तन्मात्राएँ रूप, रस, गंध, स्पर्श और शब्द क्रमशः प्रकट हुए। इसके उपरांत ही श्रीकृष्ण से साक्षात् भगवान नारायण का प्रादुर्भाव हुआ। इनकी अंगकान्ति श्याम थी। वे नित्य तरुण पीताम्बरधारी और विभिन्न वनमालाओं से विभूषित थे। उनकी चार भुजाएँ थीं। उन भुजाओं में क्रमशः शंख, चक्र, गदा और पद्म विराजमान थे। उनके मुखारविन्द पर मंद-मंद मुस्कान की छटा छा रही थी। वे रत्नमय आभूषणों से विभूषित थे। धनुष धारण किए हुए थे। कौस्तुभ मणि उनके वक्षस्थल की शोभा बढ़ा रही थी। श्रीवत्सभूषित वक्ष में साक्षात् लक्ष्मी का निवास था। वे श्रीनिधि अपूर्व शोभा को प्रस्तुत कर रहे थे। शरत्काल की पूर्णिमा के चंद्रमा की प्रभा से सेवित मुखचन्द्र के कारण वे मनोहर जान पड़ते थे। कामदेव की कान्ति से युक्त रूप-लावण्य उनके सौन्दर्य को और भी बढ़ा रहा था। श्रीकृष्ण आत्मतत्व के मूर्तिमान रूप हैं। मनुष्य में इस चेतन तत्त्व का पूर्ण विकास ही आत्मतत्त्व की जागृति है। जीवन प्रकृति से उद्भूत और विकसित होता है। अतः त्रिगुणात्मक प्रकृति के रूप में श्रीकृष्ण की भी तीन माताएँ हैं। 1. रजोगुणी प्रकृतिरूप देवकी जन्मदात्री माँ हैं, जो सांसारिक माया गृह में कैद हैं। 2. सतगुणी प्रकृति रूपा माँ यशोदा हैं, जिनके वात्सल्य प्रेम रस को पीकर श्रीकृष्ण बड़े होते हैं। 3. इनके विपरीत एक घोर तमस रूपा प्रकृति भी शिशुभक्षक सर्पिणी के समान पूतना माँ है। इसे आत्मतत्त्व का प्रस्फुटित अंकुरण नहीं सुहाता और वह वात्सल्य का अमृत पिलाने के स्थान पर विषपान कराती है। यहाँ यह संदेश प्रेषित किया गया है कि प्रकृति का तमस-तत्त्व चेतन-तत्त्व के विकास को रोकने में असमर्थ है।

अखिल विश्व में परिव्याप्त लीला-विलास में जब-जब धर्म का अपकर्ष और अधर्म का उत्कर्ष होता है, तब-तब यहाँ सामञ्जस्य स्थापित करने के लिए परम प्रभु अवतार लेते हैं। इन अवतारों में श्रीराम तथा श्रीकृष्ण परम प्रधान हैं जिन्होंने अपने आदर्श सच्चरित्रों द्वारा व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामुदायिक, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय मानवीय मर्यादा की संस्थापना करके मानव-समाज को सुसम्पन्न और समुन्नत करने की सत्प्रेरणा दी।

श्रीकृष्ण ने समस्त लौकिक विषयों की श्रेष्ठ श्रेणी का ज्ञान अर्जित किया था- गो, वत्स, चारण, रथ-संचालन, गिरि धारण, नाग-वशीकरण, वेणु, वादन, नृत्य, मल्ल-लीला, रासलीला में तो वे अपने बाल्यकाल में ही प्रवीण हो गए थे। उन्होंने यज्ञोपवीत के उपरांत ज्येष्ठ भ्राता श्रीबलराम जी के साथ संदीपनी गुरु से उज्जयिनी में धनुर्विधा, धर्मरहस्य, न्याय-विधान, दर्शनशास्त्र, राजनीति तथा अन्य समस्त कलाओं में विदग्धता प्राप्त की थी -

सरहस्यं धनुर्वेदं धर्मान् न्यायपथांस्तथा।
अहोरात्रैश्चतुष्षष्ट्या संयन्तौ तावतीः कला।'

ब्रह्मविद्या उन्होंने घोर आङ्गिरस से प्राप्त की थी। श्रीकृष्ण का सुदर्शन-प्रयोग का चमत्कार तो विश्व-विश्रुत है ही। धनुर्प्रयोग की विदग्धता भी विस्मयकारी रही है। राजकुमारी लक्ष्मणा के स्वयंवर में राजाधिराज बृहत्सेन ने मत्स्यवेध का लक्ष्य रखा था। कृत्रिम मत्स्य को इस प्रकार आच्छादित कर दिया गया था कि वह चारों दिशाओं में नहीं दीख पड़ता था। नीचे रखे गये जल में पड़ती प्रतिच्छाया को देखकर ऊपर टँगी हुई मछली को बेधना था। धनुर्बाण वहीं रखे गए थे। बहुत-से राजा तो धनुष पर प्रत्यंचा ही नहीं चढ़ा सके। जरासंध, दुर्योधन, कर्ण तथा शिशुपाल ने प्रत्यांचा तो चढ़ा ली; किंतु उन्हें लक्ष्य का पता नहीं चल सका। अर्जुन ने भी अपनी दक्षता का प्रदर्शन किया; किंतु उनका शर मत्स्य को छूता हुआ निकल गया। तदुपरांत श्रीकृष्ण ने अनायास प्रत्यंचा चढ़ाकर, मात्र एक बार पानी में मछली का प्रतिबिम्ब देखकर, बाण-संधान कर मत्स्य-वेध कर दिया। इतना असाधारण था उनका अस्त्र संचालन का परिज्ञान।

एक ब्राह्मण-संतान की खोज में एक बार अर्जुन यम, इन्द्र, सोम निर्ऋति, अग्नि, वायु, वरुण आदि देव-पुरों में, रसातल तथा नाकपृष्ठ तक घूम आए; परंतु बालक का कहीं कोई अता-पता नहीं चला। अर्जुन के अहंकार के नष्ट हो जाने पर गाण्डीव-सहित उसको अग्नि-प्रवेश के लिए तत्पर देख श्रीकृष्ण उसे अपने रथ पर बिठाकर महाकालपुर ले गए तथा भूमा-पुरुष से ब्राह्मण-संतान को वापस ले आये।

श्रीकृष्ण का लोकोत्तर ज्ञान अलौकिक था। उन्होंने समस्त उपनिषद् को दुहकर अर्जुन के लिए जो गीतामृत प्रस्तुत किया है, वह आज भी असंख्य प्राणियों के लिए सुलभ है।

श्रीकृष्ण द्वारा किये गए लोकोपकारी कार्यों से प्रजा का मंगल हुआ। अत्याचार, अनाचार तथा दुराचार को पूरी तरह विनष्ट करके उन्होंने सर्वत्र धर्म-ध्वजा फहरा दी। बाल्यकाल की अद्भुत लीलाओं तथा असामान्य पराक्रमों से मंत्रमुग्ध हो गोपिकाएँ कहती हैं 'हे भगवन्। आपका चरित्र पापहारी है, श्रवणमात्र से मंगलकारी है, प्रशस्त कवि आपकी अद्भुत लीलाओं के बारे में कविताएँ रचते हैं। उनका पारायण करने वाले मानव वस्तुतः अत्यन्त पुण्यात्मा हैं।'

श्रीकृष्ण के अनुसार यथार्थ धर्म का स्वरूप यह है कि जीवन और जगत् के प्रति हमारी दृष्टि सर्वथा चिन्मय एवं सार्वभौम बन जाए, जीव और जगत के सच्चिदानंद-स्वरूप की अनुभूति हो तथा समस्त विचार, भावनाएँ तथा क्रियाएँ उक्त दृष्टिकोण के अनुसार नियंत्रित हों। अपनी अपरिच्छिन्न सत्ता, असीम ज्ञान तथा विवेक, अनन्त प्रेम और सौजन्य, अनन्त शक्ति तथा प्रभाव से परमेश्वर इस गौरवपूर्ण विश्व में अनन्त प्रकार के रूपों में अभिव्यक्त हो रहे हैं। वे विश्वात्मा हैं तथा इस विश्व के संपूर्ण भाव-पदार्थों में आत्मप्रकाश प्रसारित कर रहे हैं। वे हर मानव-शरीर में तथा हर सजीव प्राणी में निवास करने वाली आत्मा हैं।

सर्वजनहितैषी तथा परदुःखहारी श्रीकृष्ण के निर्मल यश का श्रवण करके जरासंध के कारागृह में बन्द राजाओं ने एक दूत से यह संदेश भेजा - 'हे भगवन्! कृपया आकर हमारा संकट दूर कीजिए।' परम कारुणिक पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण ने धर्मराज युधिष्ठिर के राजसूय को सफल बनाने के लिए रिपु-चक्र-दमन किया। महाबली जरासंध का भीमसेन द्वारा वध कराकर बीस हजार क्षत्रियों को मुक्त करवाया। भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति उन क्षत्रियों द्वारा की गई स्तुति भक्तों में आज भी सुप्रचलित है -

'कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने।
प्रणत क्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नमः।।

सौन्दर्य, शौर्य तथा शील के परमोन्नत प्रतीक भगवान् श्रीकृष्ण अत्यन्त सदय, शिष्ट एवं विनम्र थे। धर्मराज युधिष्ठिर के राजसूय में अभ्यागतों के चरणों का उन्होंने प्रक्षालन किया। उनके उदात्त आदर्शों तथा निश्छल प्रेम से सारी प्रजा उनके दर्शन के लिए लालायित रहती थी।

'श्री' का अर्थ है शारीरिक सम्पत्ति या शक्ति तथा सौन्दर्य। सुदृढ़ तथा शक्तिशाली होना विश्व के सर्वोच्च सुखों में से एक है। हर एक प्राणी के हृदय में शक्तिशाली बनने की स्वाभाविक इच्छा होती है। गाय का दूध तथा नवनीत और अन्य सात्त्विक भोजन द्वारा श्रीकृष्ण ने अपने शरीर में स्थायी शक्ति संचित करके कुवलापीड़, कंस तथा शाल्व जैसे दुर्दमनीय दुष्टों को धराशायी किया था। अपने युग के प्रमुख मल्ल चाणूर से मल्लयुद्ध करते समय उसके वक्षस्थल पर दोनों घूसों से प्रहार किया तथा पुष्पमाला के लगने से जैसे गजराज विललित नहीं होता, वैसे ही चाणूर के प्रहारों से श्रीकृष्ण टस से मस नहीं हुए, क्योंकि धर्मात्माओं की रक्षा तथा दुष्टात्माओं का विनाश ही उनका लक्ष्य था -

'स श्येनवेग उत्पत्य मुष्टीकृत्य करावुभौ।

भगवन्तं वासुदेवं क्रुद्धो वक्षस्य ताडयत्।
नाचलत् तत्प्रहारण मालाहत इव द्वियः।।'

श्रीकृष्ण मात्र शक्ति के निधान ही नहीं, त्रैलोक्य सुन्दर एवं त्रिभुवन मनोहर भी थे। श्रीकृष्ण की कमनीय काया के जब जरासंध के कारागृह में पड़े राजा लोगों ने सर्वप्रथम दर्शन किए तो वे अपने चक्षुओं द्वारा उनकी मधुरिमा का पान कर रहे थे, नासापुटों द्वारा उसको आत्मसात कर रहे थे। अपनी भुजाओं द्वारा उनका आलिंगन कर रहे थे।

श्रीकृष्ण के माधुर्य का प्रभाव नर-नारियों पर ही नहीं, पशु-पक्षियों तथा वनस्पति जगत् पर भी था। श्रीकृष्ण का लोकाभिरामी रूप गोप-गोपिकाओं के हृदयों को ही नहीं, वीतरागी देवर्षि नारद जैसे महात्माओं के हृदयों को भी आनन्द से आप्लावित कर देता था -

'अथो मुनिर्यदुपतिना सभाजितः
मुकुन्द सन्दर्शननिर्वृतेन्द्रियः।'

जिनके मानस में शम, दम और विनम्रता है, जो सर्वत्र समबुद्धि तथा धर्मनिरत हैं तथा जो सद्विचार-संपन्न हैं, वे ही रूप-संपन्न होते हैं। सद्गुण-संपन्न श्रीकृष्ण परमश्री-संपन्न थे।

संसार के समस्त नर-नारियों के हृदय में ईश्वरत्व के बोध को जाग्रत करना और अपने चरित्र को उन्नत, दृष्टि बिन्दु को विशुद्ध और इच्छाओं, विचारों, भावों, वचनों तथा क्रियाओं को निर्मल एवं उदात्त करना श्रीकृष्ण के लौकिक जीवन का पुनीत लक्ष्य रहा।

अपनी वृन्दावन-लीला में सौन्दर्य, माधुर्य, आनन्द तथा प्रेम की प्रतिमूर्ति श्रीकृष्ण एक आदर्श क्रीड़ाप्रिय बालक के रूप में हमारे समक्ष प्रकट होते हैं। उस संपूर्ण भू-प्रदेश में वे अपनी कमनीयता तथा माधुर्य से आनन्द तथा प्रेम का वायुमंडल उत्पन्न कर अपने सहयोगी बालक-बालिकाओं के आकर्षण-केन्द्र बन जाते हैं। वे आदर्श पुत्र, भाई, सखा, प्रेमी, आदर्श क्रीड़ा-सहचर तथा वेणुवादक थे। अपने सखाओं, सहचरों, प्रेमियों तथा प्रशंसकों को वे सदैव सुस्नेही एवं क्रीड़ाप्रिय कुमार के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। अपनी माता यशोदा के समक्ष वे सर्वदा एक निर्दोष तथा भोले-भाले शिशु के रूप में प्रकट होते हैं।

भोले-भाले ग्रामवासियों के साथ व्यतीत हुए बाल्यकाल में सामाजिक तथा धार्मिक सुधार की प्रवृत्ति भी उनके अन्दर बहुधा जाग्रत हो उठती थी। माता-पिता तथा अन्य गुरुजनों से प्राप्त कुछ परम्परागत क्रिया-कलापों और समारोहों को समाप्त करके नयी प्रथाओं को चलाने का स्नेहसिक्त परामर्श उन्होंने दिया जो व्यावहारिक तथा आध्यात्मिक दृष्टि से अधिक उपयोगी तथा उत्कर्षदायक था। बाल्यकाल से ही सरलतम निष्कपट नर-नारियों तथा बाल-बालिकाओं के बीच रहकर श्रीकृष्ण ने अपने प्रेमपूर्ण धर्म की नींव डाली जिसका उन्होंने क्रिया-कलाप करते हुए प्रचार-प्रसार किया। अपनी लीला-पद्धति से वे क्रांतिकारी धर्मगुरु बन गए और उन्होंने विश्व को यह शिक्षा दी कि परिशुद्ध मानवोचित प्रेम की तीव्र साधना द्वारा दीर्घ क्रिया-कलापों, नियमित योग-साधनाओं, उच्चकुल तथा विद्या के अधिकारों के बिना ही कोई नर या नारी परमेश्वर के साथ आनन्दमय योग स्थापित कर सकता है।

महाभारत तथा अनेक पौराणिक ग्रंथों के अनुसार श्रीकृष्ण दीर्घकाल तक अपने असंख्य पुत्र-पौत्रों के साथ इस भूमंडल पर विराजमान रहे। वे नित्य युवा, नित्य नवीन, नित्य क्रीड़ाप्रिय, नित्य आनन्दमय, नित्य कार्यसक्षम तथा नित्य अनासक्त थे। वे अपनी आंतरिक चेतना को शाश्वत निवृत्ति तथा शांति के आनन्दमय राज्य में स्थिर रखते थे। योग-साधना को उन्होंने गिरी-गह्वरों तथा गहन वन-प्रान्तरों के निर्जन वातावरण से निकालकर खुले मैदानों में, कौटुम्बिक, सामाजिक तथा राजनीतिक क्षेत्रों में, यहाँ तक कि विकट रणभूमि में प्रतिष्ठित किया। कर्मयोग की साधना से मानव अपने भौतिक जीवन के अन्त तक तरुणों जैसी स्फूर्ति तथा क्रीड़ात्मक भाव बनाए रख सकता है। सांसारिक जीवन में अत्यंत श्रमपूर्ण कार्य करते हुए भी मानव अन्तःकरण में पूर्ण शांति, स्थिरता, उदासीनता तथा निर्भयता की अनुभूति कर सकता है। अपने मन को अहंकार से प्रेरित इच्छाओं से मुक्त कर देना तथा परमेश्वर द्वारा निर्दिष्ट कर्तव्यों का कर्ममय-जीवन के मध्य श्रीकृष्ण एक आदर्श महायोगी थे।

श्रीकृष्ण के अनुसार सर्वोच्च आध्यात्मिक महत्त्व रखने वाले सच्चे धर्म का स्वरूप इतना ही नहीं है कि किसी धार्मिक विधि-विधान में विश्वास करके, कुछ शास्त्रोक्त नियमों तथा आचारों का अनुष्ठान करके, किन्हीं विशिष्ट भावनाओं तथा मनोगत भावों का आश्रय लिया जाए या समस्त सांसारिक व्यवहारों का त्याग करके गिरि-गह्वरों तथा वनों में किन्हीं निर्दिष्ट योग-साधनों का अभ्यास किया जाए। श्रीकृष्ण के अनुसार यथार्थ धर्म का स्वरूप यह है कि जीवन और जगत् के प्रति हमारी दृष्टि सर्वथा चिन्मय एवं सार्वभौम बन जाए, जीव और जगत के सच्चिदानंद-स्वरूप की अनुभूति हो तथा समस्त विचार, भावनाएँ तथा क्रियाएँ उक्त दृष्टिकोण के अनुसार नियंत्रित हों। अपनी अपरिच्छिन्न सत्ता, असीम ज्ञान तथा विवेक, अनन्त प्रेम और सौजन्य, अनन्त शक्ति तथा प्रभाव से परमेश्वर इस गौरवपूर्ण विश्व में अनन्त प्रकार के रूपों में अभिव्यक्त हो रहे हैं। आध्यात्मिक जागृति के बिना स्वाधीनता, न्याय, एकता, समानता, बंधुत्व आदि सदैव चतुर तथा स्वार्थी गुटों के थोथे नारे या दलगत घोष-मात्र बने रहते हैं। जनता के क्षुद्र पार्थिव हितों के भेद तथा संघर्ष और उनका संकीर्ण, पूर्वाग्रह-युक्त एवं अधम मनोवृत्ति से प्रादुर्भूत समस्त सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं का समाधान यही है कि जनता के नैतिक तथा आध्यात्मिक स्तर को ऊँचा उठाया जाए, लोगों के अन्दर भगवद्विषयक अनुभूति को जाग्रत किया जाए जो उन सबकी प्रकृति में सन्निहित है।

श्रीकृष्ण सदैव ब्रह्मभाव में स्थित रहते थे। वे जीवमात्र को एक अद्वितीय परमात्मा के ही बाह्यरूप से भिन्न प्रतीत होने वाले स्वरूप मानकर उनसे प्रेम और उनकी सेवा करते थे। विश्व की समस्त घटनाओं में वे उन्हीं की अपनी लीला का आनन्द लेते थे। मानव-मात्र की पवित्रता तथा सौन्दर्य, सौजन्य और सौहार्द में उनका अटूट विश्वास था। बाह्यरूप से भ्रष्ट दिखने वाले के चित्त की शान्ति, निवृत्ति तथा उल्लास में क्षोभ होता ही नहीं। उनका प्रेम तथा सहानुभूति सबके प्रति अतिशय क्रियात्मक थी। वे अपनी गहन तथा लीलामय शैली से भी सभी प्रकार के वर्गों के नर-नारियों के चित्त में भगवद्भाव जाग्रत करने और आध्यात्मिक भाव को विकसित करने के लिए सब प्रकार के संभावित उपायों का आश्रय लेते थे। अपने अनुयायियों और अनुमोदकों के स्नेहपूर्ण सहयोग से उन्होंने मानव-निर्मित सीमाओं को मिटाने और वास्तविक धर्म-सत्ता स्थापित करने का अथक प्रयास किया।

(मुकम्मल आजादी का मतलब)

❒ उमेश कुमार

सैकड़ों सालों की गुलामी के बावजूद हिंदुस्तान की आब-ओ-हवा में ऐसी तासी महफूज रही कि आजादी की ललक को यहाँ जंग न लगी। सिर पर कफन बाँधे जांबाजों द्वारा समय-समय पर बागी कार्रवाइयों के जरिए ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ गुस्सा जाहिर करने

के छिटपुट सिलसिले ने माहौल को मुर्दा होने से बचाये रखा। दीगर बात है कि कांग्रेस-नीत स्वतंत्रता-आन्दोलन के शुरुआती दौर में नरमपंथी नेताओं के लिए आजादी का मतलब ब्रिटिश ताज की सरपरस्ती में भागीदारी का झुनझुना हासिल कर लेने तक सीमित था। उनके मंसूबे में मुल्क की मुकम्मल आजादी की धुँधली तस्वीर भी नुमाया न थी। ऐसे सिमसिमा माहौल में लोकमान्य तिलक ने 'स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' के उद्घोष से वैचारिक विस्फोट किया तो मुल्क की फजा में मुकम्मल आजादी की ललक लहक उठी। तिलक के उस गुरु-गंभीर गर्जन की गूँज से संकेत पाकर दिसंबर 1929 में कांग्रेस ने लाहौर अधिवेशन में पूर्ण स्वराज हेतु जन संघर्ष का शंख बजा दिया, जिसने स्वतंत्रता-संग्राम के तेवर को और धारदार बना दिया। आगे चलकर नेताजी सुभाष के आह्वान कि 'तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा' ने नौजवानों के दिलों में जुझारू संघर्ष की लौ को और हवा दी। इस इंकलाबी पुकार के बरअक्स तथा पहले से और आगे भी जंग-ए-आजादी में जिस्म-ओ-जान कुर्बान करने का सिलसिला जारी रहा। खुदीराम बोस, प्रफुल्ल चाकी, रास बिहारी बोस, सरदार भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, राम प्रसाद बिस्मिल, बटुकेश्वर दत्त, सुखदेव, राजगुरु तथा अशफाकुल्ला खान और अनेकानेक अनाम वीर-बाँकुरे आंदोलन के दौरान शहीद हुए।

शहीदों के खून से सिंचित भारत-भूमि में 15 अगस्त, 1947 को आजादी का फूल खिला। लाल किला के प्राचीर से रात बारह बजे राष्ट्र को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री नेहरू ने कहा, 'जब बाकी दुनिया सो रही, भारत का भाग्य जगने जा रहा है। किंतु बाद के घटना-क्रम ने नेहरू की इस उम्मीद की मुकम्मल ताईद नहीं की। स्वतंत्रता का सूरज आम लोगों के लिए बेहतरी की रौशनी लेकर नहीं उगा, अलबत्ता सत्ता के दलालों की रातें और भी रंगीन हो चलीं। गुलामी की गिरफ्त से मुक्ति मिली, मगर मुल्क रफ्ता-रफ्ता भ्रष्टाचार के पाश में जकड़ता चला गया। हालात हौले-हौले इस कदर बिगड़े कि हमारे ईमान को निमोनिया हो गया। भ्रष्टाचार की गिरफ्त में फँसी राजनीति कॉरपोरेट की जागीर हो गई, कारोबारी 'रांझे' की बिकाऊ 'हीर' हो गई। नीरा राडिया-प्रकरण इसका प्रमाण है।

भ्रष्टाचार की दिन दूनी, रात चौगुनी बढ़त से मुसलसल मुटियाती महँगाई के लिए राजनीति की बदनीयती और शासन-तंत्र की नाकामी जिम्मेवार है ही, हमारी क्षुद्र स्वार्थपरता का दोष भी कम नहीं है। मार्टिन लूथर किंग ने सही कहा था- 'बुरे लोगों की क्रूरता नहीं, बल्कि क्रूरता के बरअक्स भले लोगों की उदासीनता एवं उनका मौन समाज के चरम दुर्भाग्य का असली कारण है। कभी छोटे-मोटे फायदे के लिए तो कभी किसी भय या दबाव

> कमजोरी लोकतंत्र की नहीं, लोकतंत्र की नाव में सवार लोगों की है, दोष नाव खेनेवाली टीम का है। जनता जागरूक न हो तो शासन-प्रशासन को निरंकुश होते देर नहीं लगती। संसदीय व्यवस्था लागू हुए छः दशक बीत गए, फिर भी हमारे बहुतेरे जनप्रतिनिधियों में संसदीय गरिमा एवं मर्यादा के प्रति आदर का अभाव चिंताजनक है। नागरिक समाज की ओर से कुशासन, भ्रष्टाचार एवं महँगाई से मुक्ति की माँग उठती है तो 'माननीयों' को नागवार गुजरती है, संसद की सर्वोच्चता की आड़ में जन-आकांक्षा का गला घोटने की कोशिश की जाती है। स्थिति बदतर होती जा रही है। वर्तमान लोकसभा के 162 'माननीयों' के विरूद्ध आपराधिक मुकदमा दायर हैं जिनमें दोष सिद्ध होने पर दो वर्ष या अधिक कैद की सजा का प्रावधान है।

के कारण हम भ्रष्टाचार के साथ समझौता कर लेते हैं। जब हम भ्रष्टाचार से भिड़ने का मन बना भी लेते हैं तो कानून के दाव-पेंच के आगे हथियार डाल देते हैं। समस्या यह भी है कि शिकायत करें तो कहाँ? 'हमने सोचा था कि हाकिम से करेंगे शिकवा/मगर वह कमबख्त भी तेरा चाहनेवाला निकला।'

विचित्र विडंबना है, लोकतंत्र, पूरी दुनिया जिसे सबसे जनहितैषी और कारगर शासन-व्यवस्था स्वीकारती है, वही भ्रष्टाचार के सामने असहाय दिखता है, पंगु और लाचार नजर आता है। कमजोरी लोकतंत्र की नहीं, लोकतंत्र की नाव में सवार लोगों की है, दोष नाव खेनेवाली टीम का है। जनता जागरूक न हो तो शासन-प्रशासन को निरंकुश होते देर नहीं लगती। संसदीय व्यवस्था लागू हुए छः दशक बीत गए, फिर भी हमारे बहुतेरे जनप्रतिनिधियों में संसदीय गरिमा एवं मर्यादा के प्रति आदर का अभाव चिंताजनक है। नागरिक समाज की ओर से कुशासन, भ्रष्टाचार एवं महँगाई से मुक्ति की माँग उठती है तो 'माननीयों' को नागवार गुजरती है, संसद की सर्वोच्चता की आड़ में जन-आकांक्षा का गला घोटने की कोशिश की जाती है। स्थिति बदतर होती जा रही है। वर्तमान लोकसभा के 162 'माननीयों' के विरूद्ध आपराधिक मुकदमा दायर हैं जिनमें दोष सिद्ध होने पर दो वर्ष या अधिक कैद की सजा का प्रावधान है।

लोकतांत्रिक व्यवस्था में, जन प्रतिनिधि हों या नौकरशाह, बुनियादी तौर पर लोक सेवक हैं, जो जनता की जहालत और गफलत का बेजा फायदा उठाकर मुल्क के मालिक-मुख्तार तथा जनसाधारण के 'माई-बाप' बन बैठे हैं। विडंबना यह भी है कि दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र के अधिकांश राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र का अभाव है, हालाँकि चुनाव आयोग का चाबुक चलते रहने के कारण संगठनात्मक चुनाव की खानापुरी कर ली जाती है। किंतु संगठन के सारे पद 'दुल्हन वही जो पिया मन भाये' की तर्ज पर भर दिए जाते हैं। अधिकतर दल व्यक्तिवाद-पूजक हैं, परिवारवाद के पोषक हैं, नेता की निजी जागीर के तौर पर संचालित होते हैं। नेता और परिवार के खास लोगों को छोड़, बड़े-से-बड़े पदधारी तथा आम कार्यकर्त्ता सभी की हैसियत नेता और उसके वारिसों की पालकी ढोनेवाले से अधिक नहीं होती। पूरे देश में पाँच-सात सियासी पार्टी चिन्हित करना कठिन है जो परिवारवाद के रोग से ग्रस्त नहीं हैं।

जन प्रतिनिधियों का निर्वाचन लोकतांत्रिक प्रक्रिया से होने के बावजूद शासन के शीर्ष पर ऑलिगैर्कि हावी हो गई है। पारिवारिक मिल्कियत में तब्दील हो चुके राजनीतिक दलों के मालिक-मुख्तार मिलजुल कर (सहमति के साथ-साथ विरोध का मंचन भी शामिल है) सत्ता और सियासत का संचालन तथा संसाधनों की बंदरबाँट करते हैं। परदे के पीछे से कॉरपोरेट और क्राइम-सिंडिकेट की प्रॉम्पटिंग की खास अहमियत होती है। चतुर-चालाक नौकरशाह भी इस बंदरबाँट के एक फरीक हैं। अनुमानतः राष्ट्र की कुल परिसंपत्ति का 53 प्रतिशत देश की आबादी के दस फीसद धूर्त जुगाड़ियों के कब्जे में है। आधी से अधिक आबादी कमरतोड़ महँगाई से बीस रुपये रोज की आमदनी के तहत जिंदगी घसीटने को विवश है।

देश में अनुमानतः प्रतिवर्ष 35 हजार करोड़ रुपये की काली कमाई होती है, जिसका दस फीसदी विदेशों में भेज दिया जाता है। काले धन के विभिन्न पहलुओं की पड़ताल हेतु दर्जनों कमिटी बनी, सैकड़ों उपाय सुझाये गए, अमल का दिखावा भी हुआ, मगर मर्ज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की। काले धन के मामले में आरोपित हसन अली ने जाँच एजेंसियों के समक्ष राज खोला कि मॉरीशस के बैंकों में उसके नाम से जमा काले धन का बड़ा हिस्सा महाराष्ट्र के तीन पूर्व मुख्यमंत्रियों और वरिष्ठ नौकरशाहों का है। 1982 में यू.बी.एस.बैंक, सिंगापुर में पाँच करोड़ जमा करानेवाले अली के खाते में 1999 तक 45 हजार करोड़ रुपये जमा हो चुके थे। अली ने बताया कि हवाला के जरिए वह नेताओं और नौकरशाहों की काली कमाई विदेश ले जाता था और शेयर बाजार में निवेश कर कालेधन को सफेद बनाता था। दुःखद आश्चर्य की बात है कि हमारी सरकारें इस व्यवसाय की न सिर्फ मूकदर्शक बनी रहीं, बल्कि इस विधि बढ़ते निवेश को उपलब्धि बतौर पेश करती रहीं। आज आलम यह है कि हांगकांग की 'पॉलिटिकल एंड इकोनॉमिक रिस्क कंसल्टेंसी लिमिटेड' की रिपोर्ट में भारत एशिया प्रशांत के 16 भ्रष्टतम देशों की सूची में चौथे स्थान पर है।

योजनाओं के प्रारूपकार दावा कर रहे हैं कि देश विकास के पथ पर तीव्र गति से अग्रसर है। अब अगर विकास की तेज रफ्तार गाड़ी में जगह पाने से आम लोग वंचित रह गए तो रोना किस बात का? तेज रफ्तार गाड़ी आमलोगों के लिए तो नहीं होती न। भले ही वंचित बदकिस्मतों की तादाद आबादी के अस्सी फीसद से अधिक क्यों न हो।

विश्व महाशक्ति बनने का सपना देखना बुरी बात नहीं; किंतु जरूरी है कि विकास समावेशी हो, सुख-संपत्ति का न्यायोचित बँटवारा हो, देश में कोई भी भूखा-नंगा न रहे, शिक्षा, सुरक्षा, स्वास्थ्य सेवाएँ, रोजगार सबको सहज उपलब्ध हों। भूलना नहीं चाहिए कि लोकतंत्र में जनता सर्वोपरि है। सरकार, संसद, संविधान जनहित सुनिश्चित करने के साधन हैं, जनता के अधीन हैं। बापू ने जिस रामराज्य की कल्पना की थी, आम आदमी ही उसके केन्द्र में था। जब तक सत्ता लोकोन्मुख नहीं होगी, आजादी अधूरी रहेगी; किंतु सारा दोष सत्ता और सियासत के माथे मढ़ देने मात्र से मसला हल नहीं होगा। हमें यानी अवाम को भी जागरूक तथा फर्ज पाबंद होना होगा। जरूरी है कि देश-समाज को बाँटनेवाली जाति, संप्रदाय तथा दीगर भेदभावपरक प्रवृत्तियों के दमघोंटू दड़बों से हम बाहर निकलें। सौहार्द, समता एवं समरसता के समावेशी माहौल में ही विकास और समृद्धि के कागजी नहीं, असली फूल खिलेंगे।

स्वतंत्रता दिवस : यह भी सच है

❐ उमेश प्रसाद सिंह

15 अगस्त, 1947 को देश भर में उत्सव का माहौल था। बड़े-बड़े गुब्बारों से आकाश आच्छादित हो गया था। पटाखे उड़ाए जा रहे थे। आकाशवाणी का उद्घोषक बहुत ही मनमोहक ढंग से राजधानी दिल्ली में मनाए जाने वाले उत्सव की, अपने शब्दों से देशभर को जानकारियाँ दे रहा था। नेताओं की जयकार के गगनभेदी नारे लगाए जा रहे थे। हेलीकोप्टर पुष्पवर्षा कर रहे थे। पं. जवाहरलाल नेहरू और लॉर्ड माउण्टबेटन शानदार रथों पर सवार होकर लाल किले की ओर बढ़ रहे थे। उसी समय इसके विपरीत एक भयानक और वीभत्स चित्र उभर रहा था। भारत माता को चीरकर दो टुकड़े कर दिये गए थे। भारत की धरती पर ही भारत के प्रति घृणा और दुश्मनी से उत्प्रेरित पाकिस्तान नाम के एक कृत्रिम राष्ट्र ने जन्म ले लिया था। वहाँ रहने वाले पर तरह-तरह के अत्याचार हो रहे थे। लाखों लोग अपनी धन-संपत्ति वहीं छोड़कर पलायन कर गए थे। काफिले पर काफिले मुलतान, लाहौर, स्यालकोट, करांची, लायलपुर आदि की ओर से उमड़े चले आ रहे थे। यही हाल पूरब में बंगाल का था। मुहल्ले धूँ-धूँ कर जल रहे थे। उनसे उठती लपटें आकाश को छू रही थीं। नन्हें-नन्हें बच्चों को भालों की नोंक पर उछाला जा रहा था। वहाँ की सेना और अन्य सुरक्षा बल आततायियों के समर्थन में गोलियाँ चला रहे थे।

उस समय पाकिस्तान में अपनी संपूर्ण सम्पत्ति छोड़कर अपने संबंधियों की बलि चढ़ाकर जो भी भारत आ रहा था, उसकी जुबान पर था- 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ।' सभी एक स्वर से कह रहे थे कि यदि संघ के लोग अपनी जान हथेली पर रखकर हमारी मदद को नहीं आते तो एक भी हिन्दू जीवित नहीं बचता। यह सच है कि उस राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के लोगों ने आवास, भोजन एवं कपड़ों का प्रबंध किया। हजारों लोगों को शरणार्थी शिविरों में पहुँचाया। उन्हें भारत लाने का प्रबंध किया। प्राणों की बाजी लगाकर और बलिदान देकर लाखों लोगों को सुरक्षित किया; परंतु उस संबंध में एक अखबार ने लिखा, 'It is sad and unfortunate, but true.' क्योंकि यह काम संघ ने किया था। अकाली दल और स्वयंसेवकों ने लाखों नागरिकों को संरक्षण दिया, मानो यह उनका दोष था। इसके विपरीत तत्कालीन

टेलीफोन पर एक बेबस की करुण आवाज से यह सब सुनकर पं. नेहरू चीख पड़े थे। वे बाहर आए और धड़ाम से कुर्सी में धँस गए। उनका चेहरा पीला पड़ गया था जिसे उन्होंने अपने दोनों हाथों से ढक लिया। थोड़ी देर बाद उन्होंने इंदिरा जी और पद्मजा नायडू की ओर देखा। उनकी आँखों में आँसू भरे थे। कंठ से आवाज भी साफ नहीं निकल रही थी। अत्यंत धीमे व अस्पष्ट स्वर में वे फुसफुसा रहे थे- आज रात को मैं कैसे भाषण कर सकूँगा? जबकि मेरा प्रिय और सुहावना लाहौर धू-धू कर जल रहा है।

उपप्रधानमंत्री सरदार पटेल ने लिखा- 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने संकट काल में हिन्दू समाज की सेवा की, इसमें कोई संदेह नहीं। ऐसे क्षेत्रों में जहाँ उनकी सहायता की आवश्यकता थी, संघ के नवयुवकों ने स्त्रियों तथा बच्चों की रक्षा की तथा उनके लिए काफी काम किया। किंतु मुझे विश्वास है कि संघ के लोग अपने देशभक्तिपूर्ण कामों को कांग्रेस के साथ मिलकर भी कर सकते हैं।'

काली और सफेद टोपी

अमृतसर स्टेशन पर जब कोई ट्रेन पाकिस्तान से आती तो वहाँ संघ के स्वयंसेवक अपनी काली टोपी पहनकर तथा कांग्रेसी कार्यकर्ता सफेद टोपी लगाकर स्टेशन पर उपस्थित रहते थे। ज्योंही गाड़ी आती, दोनों समितियों के कार्यकर्ता विस्थापितों को अपने साथ ले जाने हेतु आगे बढ़ते थे। परंतु विस्थापित एक स्वर में कहते थे कि हमें तो काली टोपी वालों ने बचाया है। हमें उन पर भरोसा है। हम उनके साथ ही जाएँगे। सफेद टोपी वालों के कारण ही तो हमें अपना घर-द्वार छोड़ना पड़ा है। इन टिप्पणियों को सुनकर कांग्रेसी कार्यकर्ताओं ने विस्थापितों से भरे ट्रकों को रोकना आरंभ किया। एक बार उनका एक नेता ट्रक के सामने लेट गया और जोर-जोर से चिल्लाने लगा कि जब तक विस्थापित हमारे साथ नहीं जाएँगे, मैं ट्रक को चलने नहीं दूँगा। काफी देर तक उन्हें समझाया गया, पर वे माने नहीं। तब एक कार्यकर्त्ता ने कहा- 'चलाओ ट्रक, यह मरेगा नहीं, बल्कि भाग जाएगा और वैसा ही हुआ।' ऐसी स्थिति थी उन दिनों।

पानी की आपूर्ति बंद

चौदह अगस्त, 1947 की शाम के समय

पं. जवाहरलाल नेहरू रात्रि के भोजन पर बैठे ही थे। उनकी पुत्री इंदिरा गांधी और मेहमान पद्मजा नायडू भी वहाँ पर थीं। अचानक उनके अध्ययन कक्ष में टेलीफोन की घंटी बज उठी। टेलीफोन का चोंगा उठाया तो कोई लाहौर से बोल रहा था। वह कह रहा था कि पुराने शहर के सभी हिन्दू-सिखों के आवासों की पानी की आपूर्ति बन्द कर दी गई है। जनता त्राहि-त्राहि कर रही है। भीषण गर्मी में प्यास के मारे दम निकल रहा है। यदि प्यासे कंठों को सींचने हेतु एक बाल्टी जल की याचना करने कोई महिला या बच्चा भी मुहल्ले से बाहर जाता है तो बाहर खड़ी भीड़ उस पर टूट पड़ती है, उनकी बेरहमी से कत्ल कर देती है। नगर के आधा दर्जन भागों में आग की लपटें उठ रही हैं और आग बेकाबू हो रही है।

टेलीफोन पर एक बेबस की करुण आवाज से यह सब सुनकर पं. नेहरू चीख पड़े थे। वे बाहर आए और धड़ाम से कुर्सी में धँस गए। उनका चेहरा पीला पड़ गया था जिसे उन्होंने अपने दोनों हाथों से ढक लिया। थोड़ी देर बाद उन्होंने इंदिरा जी और पद्मजा नायडू की ओर देखा। उनकी आँखों में आँसू भरे थे। कंठ से आवाज भी साफ नहीं निकल रही थी। अत्यंत धीमे व अस्पष्ट स्वर में वे फुसफुसा रहे थे- आज रात को मैं कैसे भाषण कर सकूँगा? जबकि मेरा प्रिय और सुहावना लाहौर धू-धू कर जल रहा है।

आई गाड़ी पर लाशों की

अगले दिन 15 अगस्त, 1947 को लाहौर से एक रेलगाड़ी अमृतसर आयी। नाम था 10 डाऊन एक्सप्रेस। सैकड़ों लोग अपने सगे-संबंधियों की आगवानी करने स्टेशन पर आए थे। गाड़ी प्लेटफार्म पर आकर खड़ी हो गई। रेलवे का उद्घोषक बार-बार -'अमृतसर रेलवे स्टेशन पर आपका स्वागत है'- यह सूचना बड़ी आत्मीयता भरे स्वर में दे रहा था। 'अब आप अमृतसर में हैं। यहाँ कोई खतरा नहीं है। पुलिस का पूरा प्रबंध है। आपके स्वागत हेतु सैकड़ों सगे-संबंधी पलक-पांवड़े बिछाकर खड़े हैं। बाहर आइए।' पर बाहर कौन आता? वहाँ तो कटी लाशों के अलावा और कुछ नहीं था। जब कोई बाहर नहीं निकला तो स्टेशन मास्टर समेत कई लोग डिब्बों में झाँककर देखने लगे। कई को तो गश आ गया। अंदर सभी डिब्बों में वीभत्स दृश्य था। डिब्बे लाशों से भरे थे। अंतिम डिब्बे तक लाशों से भरे थे। अंतिम डिब्बे पर लिखा गया था 'आजाद भारत को पाकिस्तान की ओर से सप्रेम भेंट।' इस दृश्य ने लोगों को आग-बबूला कर दिया और फिर इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई।

जब कोई बाहर नहीं निकला तो स्टेशन मास्टर समेत कई लोग डिब्बों में झाँककर देखने लगे। कई को तो गश आ गया। अंदर सभी डिब्बों में वीभत्स दृश्य था। डिब्बे लाशों से भरे थे। अंतिम डिब्बे तक लाशों से भरे थे। अंतिम डिब्बे पर लिखा गया था, 'आजाद भारत को पाकिस्तान की ओर से सप्रेम भेंट।' इस दृश्य ने लोगों को आग-बबूला कर दिया और फिर इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई।

विचित्र मानसिकता

1947 में हिन्दू समाज की कैसी विचित्र मानसिकता थी। इसका सजीव चित्रण डॉ. भाई महावीर ने किया है। उन्होंने लिखा है कि लूट-पिट कर आ रहे हिन्दू विस्थापितों की मदद हेतु राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने पंजाब रिलीफ कमेटी का गठन किया था। इसका केन्द्र था डॉ. गोकुलचंद नारंग की लाहौर की विशाल कोठी। इसके तहखानों में छतों तक जनता से एकत्र समान भरा रहता था। जब तब डॉ. नारंग पूछा करते थे कि आप लोग कुछ अवैध हथियार वगैरह तो यहाँ नहीं रखते। तब उन्हें समझाने में बड़ी कठिनाई होती थी कि यहाँ कोई भी अवैध शस्त्र नहीं है, केवल सहायता हेतु एकत्र कपड़े, बर्तन, खाद्यान्न व दवा आदि है। परंतु जब लाहौर में ही कुछ नारे उनकी नींद हराम करने लगे तथा जलते मकानों से निकलती लपटें आकाश को छूने लगीं तो वही डॉ. नारंग पूछने लगे कि तुमने केवल कपड़े आदि ही एकत्र किए है या बचाव के लिए कुछ हथियार भी जमा किए हैं।

कसम का ध्यान

मदन गोपाल सिंह पंजाब विश्वविद्यालय में रजिस्ट्रार थे। वे अति सज्जन व्यक्ति थे। सब उनका आदर करते थे। वे अगस्त, 1947 में लाहौर से चलकर किसी काम से अमृतसर आए थे; परंतु वापस चले गए। उन्हें चेताया गया कि वहाँ आपकी जान सुरक्षित नहीं है। वे माने नहीं। कहा कि पूरा स्टाफ मेरा मित्र है। उन सबने कुरान की कसम खाकर मुझे बुलाया है। पर उनके स्टाफ वालों ने ही उनकी ही टेबल पर उन्हें जबरन लिटाकर क्रूरतापूर्वक उनकी हत्या कर दी। वे चिल्लाते रह गए कि 'अरे कुरान की कसम का तो ध्यान रखो।'

पर्यावरण को स्वच्छ बनाने की जिम्मेवारी हमारी है

❒ गीता सिंह

मनुष्य के विकास में पर्यावरण आधारी पक्ष है; क्योंकि यह जैव-जगत का नियामक है। पर्यावरण ही है जिसने पृथ्वी को जीवित जगत का गौरव प्रदान किया है। मानव सहित सभी जीव-जन्तु व पादप इसी पर्यावरण की देन हैं। सभी जीव व उसके आस-पास का माहौल जीवन जीने व सकारात्मक विकास का महत्त्वपूर्ण कारक होता है। कोई भी जीव जन्म से मरण तक अपनी सारी गतिविधियाँ इसी के इर्द-गिर्द संपन्न करता है।

मानव इस सृष्टि की सबो त्तम रचना है जो पर्यावरण के रहस्यों को सर्वाधिक समझ पाया है। समस्त अनुक्रियाएँ जैसे आधारभूत आवश्यकताएँ, (भोजन, वस्त्र व घर आदि) प्रमुख उद्योग, महत्त्वपूर्ण उद्यम, सामाजिक आवश्यकता एवं सौर मंडलीय क्रियाकलाप आदि का सीधा संबंध पर्यावरण से है।

सभी जीव अपने पर्यावरण के प्रति अति संवेदनशील होते हैं। अपने जीवन यंत्र को सतत बनाए रखने के लिए वे समायोजन करते हैं। पर्यावरण से समायोजन की प्रक्रिया मनुष्य ने एक इकाई के रूप में नहीं, बल्कि एक परिवार व समाज के रूप में सीखा है।

आदिवासी परिवार अपनी मूलभूत आवश्यकता के लिए प्रकृति पर निर्भर रहते हैं। प्रकृति को वे पालनकर्ता मानते हैं और अपनी सीमित आवश्यकता के कारण प्रसन्न रहते हैं। प्रकृति से उनका अन्तर्संबंध सहजता पर आधारित होता है। लेकिन जिस मानव समाज में बढ़ती जनसंख्या एवं बढ़ती आवश्यकता ने उसे उत्प्रेरित किया, वह समाज प्रकृति के भरोसे न बैठकर अपनी आवश्यकता के अनुसार पर्यावरण को परिभाषित करने लगा। जंगल से भोजन प्राप्त करने के स्थान पर कृषि व पशुपालन का विकास इसी क्रम का प्रतीक है। धीरे-धीरे विज्ञान और तकनीक के विकास से अधिक जनकल्याण की परिकल्पना विकसित हुई। फलतः अधिक उत्पादन के लिए पर्यावरण के संसाधनों का बड़े पैमाने पर दोहन शुरू हुआ। इस प्रक्रिया में प्रकृति के प्रति अनुदार रवैया दिनों-दिन बढ़ता गया। फलतः प्राकृतिक तत्त्वों की गुणवत्ता में तीव्र ह्रास यह प्रमाणित करने लगा कि प्रकृति की स्वनियामक एवं स्वअभिवर्द्धक शक्ति क्षीण होती जा रही है जो जीवन की गुणवत्ता को ही नष्ट कर देगी। इस बोध से नई चेतना जागृत हुई है जिसके फलस्वरूप पर्यावरण प्रबंधन, पर्यावरण संरक्षण, पर्यावरण सुधार जैसे विचारों का जन्म हुआ है।

राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण बोध अपेक्षाकृत अधिक सशक्त होता है, क्योंकि राष्ट्र निर्माण के कार्यक्रम पर्यावरण शोध पर आधारित होते हैं। राष्ट्रीय स्तर पर पारिस्थितिकीय गुत्थियों का बोध आसानी से किया जा सकता है। राष्ट्र अपने पर्यावरणीय तत्त्वों जैसे मौसम और जलवायु, मृदा या मिट्टी, धरातल, खनिज, वनस्पति और जीव-जन्तु का सही ज्ञान प्राप्त कर अपने क्रियाकलापों को व्यवस्थित कर सकता है। राष्ट्र अपने प्राकृतिक प्रकोप का निवारण पर्यावरण बोध के अनुसार करता है। उदाहरणस्वरूप यदि भारत सरकार चाहती है कि देश प्राकृतिक प्रकोपों से बचा रहे तो उसे अपने संपूर्ण भू-भाग के 33% भागों पर जंगलों का विकास करना होगा।

राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण बोध अपेक्षाकृत अधिक सशक्त होता है, क्योंकि राष्ट्र निर्माण के कार्यक्रम पर्यावरण शोध पर आधारित होते

हैं। राष्ट्रीय स्तर पर पारिस्थितिकीय गुत्थियों का बोध आसानी से किया जा सकता है। राष्ट्र अपने पर्यावरणीय तत्त्वों जैसे मौसम और जलवायु, मृदा या मिट्टी, धरातल, खनिज, वनस्पति और जीव-जन्तु का सही ज्ञान प्राप्त कर अपने क्रियाकलापों को व्यवस्थित कर सकता है। राष्ट्र अपने प्राकृतिक प्रकोप का निवारण पर्यावरण बोध के अनुसार करता है। उदाहरणस्वरूप यदि भारत सरकार चाहती है कि देश प्राकृतिक प्रकोपों से बचा रहे तो उसे अपने संपूर्ण भू-भाग के 33% भागों पर जंगलों का विकास करना होगा।

विश्व विकास के चरम सीमा पर पहुँचने के लिए उसने न जाने कौन-कौन से हथकंडे अपनाए होंगे। विकास के इस क्रम में साक्षरता का प्रतिशत भी काफी बढ़ा है। हर 100 में 75 व्यक्ति अपने को पढ़ा-लिखा मानता है, पर जब उसकी जिम्मेदारी की बात आती है तो वह प्रतिशत शून्य के भी नीचे जाने लगता है। यह अक्षरशः सत्य है कि मनुष्य के विकास की प्रक्रिया में प्रकृति उसका सबसे बड़ा सहयोगी व मार्गदर्शक रहा है; परंतु आज हमारी लापरवाहियों व प्रकृति के प्रति अनदेखी की वजह से हम उसकी आँखों में खटकने लगे हैं, जिसका परिणाम हमें आए दिन भुगतना पड़ रहा है।

भौगोलिक पर्यावरण हो अथवा सामाजिक व आर्थिक, हर परिप्रेक्ष्य में हमें अपनी सूझ-बूझ व जिम्मेदारियों का परिचय देते हुए आने वाले संकटों से ऊपर उठना होगा। आज प्रकृति की सच्चाइयों और उसकी असीम शक्ति को जिस कदर हम नजरअंदाज कर रहे हैं, उसके विपरीत परिणाम को देख के भी महटिया जाते हैं, उसके आँसू में भींग बरसात मनाते हैं, उसके दिल के अंगारों पर फायर फ्रूफ चादरें डाल कर सो जाते हैं। भूकम्प प्रतिरोधी इमारतों में रह कर अगर ये सोचते हैं कि प्रकृति मेरा क्या बिगाड़ लेगी तो यह हमारी सबसे बड़ी व आखिरी भूल है; क्योंकि इसके बाद हमारे पास वक्त न होगा कि हम अपनी गलतियों को सुधार सकें।

हम पौ फटने से लेकर देर रात तक सिर्फ अपनी जरूरतें पूरा करने व धन संग्रह में लगा देते हैं। वर्षों-वर्षों तक हम सूर्य के सुदर्शन नहीं कर पाते हैं, चाँद-सितारे की अठखेलियाँ व कहानियों की जगह बच्चों को रावड़ी रॉठोर व कॉकटेल, डॉन आदि मूभी दिखाते हैं।

सुबह जहाँ पहले उठने के साथ लोग घर से बाहर निकल कर सूर्य नमस्कार कर स्वास्थ्य वृद्धि की कामना करते थे, अब उसकी जगह टीवी खोलकर मॉर्निंग शो देखने लगते हैं।

सुबह देर तक सोना व देर रात तक जगना, पढ़े लिखे व व्यस्त होने का प्रमाण है। ये लोग एडवांस कहलाते हैं। आज मानव दिन प्रति दिन प्रकृति से दूर होता जा रहा है और इसके प्रति अपनी जिम्मेदारी को भूलता जा रहा है और क्यों न भूले, क्योंकि अब उसे पानी के लिए नदी तालाब व कुओं तक जाना नहीं पड़ता। अब तो साफ पानी उसके घर के नलों में मौजूद रहता है।

जंगल जब उसकी आवश्यकता को पूरा करते होंगे तो करते होंगे, आज तो वह जंगली जानवरों के महत्त्व की चीज है। आन्तरिक व बाह्य दोनों माहौल इस कदर प्रदूषित होते रहे हैं कि सभी जीव-जन्तु इसकी चपेट में आ गए हैं। गैरजिम्मेदाराना हरकतों से अपने देश के बाह्य संसाधनों व जीव जन्तुओं को तो खोते ही जा रहे हैं, अपनी पवित्रतम नदियों को भी विषैला कर विनाश तक पहुँचाने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़े हैं। कुछ दिन पहले पी-7 चैनल से एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण बात जानने को मिली। वो यह कि गंगा नदी का उद्गम स्थल अब गोमुख न होकर नन्दनवन हो चुका है। ये न्यूज देखकर मन चिंतित हो गया कि क्या सचमुच हमारी अनमोल विरासत हमारी पापहारिणी गंगा पापियों के पाप से तंग आकर अपना रास्ता परिवर्तित कर लेगी। पिछले वर्ष की जानकारी से पता चलता है कि बाँधव गढ़ जैविक अभयारण्य में अब मात्र एक बाघ बचा है। आज हमारी आवश्यकताएँ इतनी असीमित हैं कि उसकी पूर्ति के अतिरिक्त हमें कुछ न तो सुनाई देता है न दिखाई।

आज बहरों व गूँगों के बीच चाहे जितना चिल्ला लो, लोग कानों में ठेपी डाले बैठे हैं। जागते तब हैं जब उनके घरों में खुद मुसीबत टूट पड़े। पड़ोसी चिल्ला-चिल्ला कर मुसीबत में बुलाए व हाथ माँगे तो नहीं सुनाई पड़ता; किन्तु जब बारिश का पानी सड़ के घरों में घुसता है तब मदद शब्द का अर्थ नजर आता है। मैं किसे समझा रही हूँ, अपने-आप को या लेखनी को, क्योंकि अगर देश की जनता जागरूक होती तो आज उसे पर्यावरण संरक्षण व बचाव हेतु चिल्लाकर व झकझोर कर जगाने की जरूरत नहीं पड़ती। यहाँ सब तमाशबीन हैं। मैं तो बस इतना कह सकती हूँ कि 'जागना है तो जाग ले। सूरज की रौशनी अंधेरे का इंतजार न कर। मसीहा बन उठ चल जल्दी, और किसी के आने का इंतजार न कर।' मेरी बातें अभी समाप्त नहीं हुईं, न तब तक होंगी जब तलक मैं पुनः आपको संतुलित पर्यावरण से रूबरू न करा दूँ। उसके अस्तित्त्व के आँचल तले अपना अस्तित्व न बना लूँ। इसके साथ ही स्वच्छ पर्यावरण को अपनी पहचान न बना लूँ।

भारतीय साहित्य में पर्यावरण

□ डॉ. सुधांशु चतुर्वेदी

भूमि, जल, अग्नि, आकाश और वायु नामक पंचभूतों से निर्मित शरीर वाले मानव तथा सत्त्व, रज और तम की साम्यावस्था से प्रादुर्भूत पर्यावरण का पारस्परिक संबंध उतना ही पुरातन है जितना सृष्टि के उद्भव तथा विकास का इतिहास। वस्तुतः पर्यावरण को अंग्रेजी में 'एनवायरनमेंट' कहा जाता है जिसका अर्थ होता है चारों तरफ का घेरा अर्थात् जो चारों ओर से आवृत किए है। प्राकृतिक वातावरण में हवा, पानी, भूमि, जलवायु, जंगल, तापमान, खनिज पदार्थ इत्यादि सभी कुछ सम्मिलित हैं। सभी प्राणी अपनी प्रगति एवं व्यवस्थित जीवन-क्रम-हेतु संतुलित वातावरण पर निर्भर करते हैं। संतुलित अवस्था में प्रत्येक तत्त्व एक निश्चित मात्रा में विद्यमान रहता है। जब ये तत्त्व

असंतुलित हो जाते हैं तब वातावरण प्रदूषित हो जाता है जो मानव को किसी न किसी रूप में हानि पहुँचाता है। इसे प्रदूषण कहते हैं। मानव जब से पृथ्वी पर आया तब से उसने अपने आपको पर्यावरण में पाया तथा तभी से उसमें रुचि रखता रहा है। मानव सदैव प्रकृति पर निर्भर रहा है। मानव और प्रकृति में एक सामंजस्य था। सृष्टि की उत्पत्ति की धारणा से प्रकृति और मानव के मध्य समन्वयात्मक संबंधों के प्रमाण उपलब्ध हैं जिससे प्रकृति एवं मानव में समता के भाव स्वयमेव स्पष्ट हो जाते हैं।

आदि मानव-शिशु ने पर्यावरण-माँ की गोद में ही आँखें खोलीं थीं, उसी की गोद में क्रीड़ा करते हुए वह बड़ा हुआ तथा अन्ततः उसी के सुदृढ़ आलिंगन में परिबद्ध हो विलीन हो गया। पर्यावरण के विस्मयकारी क्रिया-कलापों से उसमें भय, प्रेम आदि भावनाओं का स्फुरण हुआ। उसी की नियमितता देख उसके मस्तिष्क में ज्ञान-विज्ञान की बुद्धि का विकास हुआ। दार्शनिक दृष्टि से मानव और पर्यावरण का संबंध चिरंतन है, चिरस्थायी है। सत् स्वरूपी पर्यावरण, चिदाकार जीवात्मा एवं आनन्द-स्वरूपी परम तत्त्व ये तीनों मिलकर ही सच्चिदानन्द स्वरूपी परमेश्वर की अखण्ड सत्ता का स्वरूप धारण करते हैं। भौतिक, मानसिक और आध्यात्मिक इन तीनों ही दृष्टियों से पर्यावरण मानव का पालन-पोषण करता हुआ मानव को जीवन में आगे बढ़ाता है।

मानव के पर्यावरण से इस अविच्छेद्य संबंध की अभिव्यक्ति धर्म, दर्शन, साहित्य में पुरातन काल से होती आ रही है। साहित्य मानव-जीवन की प्रतिच्छाया है। इसलिए उस प्रतिच्छाया में उसके सहयोगी पर्यावरण की उपस्थिति अपरिहार्य है। मानव-हृदय तथा काव्य के बीच पर्यावरण एक संयोजक का कार्य भी करता है। अपने पर्यावरण से प्रभावित होकर न जाने कितने ऋषि-मुनियों तथा साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं का ताना-बाना बुना है।

मानव के पर्यावरण से इस अविच्छेद्य संबंध की अभिव्यक्ति धर्म, दर्शन, साहित्य में पुरातन काल से होती आ रही है। साहित्य मानव-जीवन की प्रतिच्छाया है। इसलिए उस प्रतिच्छाया में उसके सहयोगी पर्यावरण की उपस्थिति अपरिहार्य है। मानव-हृदय तथा काव्य के बीच पर्यावरण एक संयोजक का कार्य भी करता है। अपने पर्यावरण से प्रभावित होकर न जाने कितने ऋषि-मुनियों तथा साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं का ताना-बाना बुना है।

विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद में भी पर्यावरण-चित्रण उपलब्ध है। ऋग्वेद में उषा, सूर्य, मरुत, इन्द्र इत्यादि को अलौकिक शाक्तियों के रूप में स्वीकार करते हुए उनके मानवीय क्रिया-कलापों का चित्रण किया गया है। उषा की कल्पना एक कुमारी कन्या के रूप में करते हुए सूर्य को उसका प्रेमी बताया गया है - 'हे प्रकाशवती उषा! तुम कमनीय कन्या की तरह अत्यधिक आकर्षक बनकर अपने प्रियतम सूर्य के निकट जाती हो और उसके समक्ष स्मित-वदना युवती की तरह अपने वक्षस्थल को निरावृत्त करती हो।'

पुरूरवा को छोड़कर जाती हुई उर्वशी के रूप को भी मेघों को चीरकर जाती हुई विद्युत की भाँति चित्रित किया गया है। मण्डूक सूक्त में वर्षा के आगमन और मेढ़कों पर उसके आह्लादकारी प्रभाव का अत्यंत मनोहारी वर्णन किया गया है -'जल की बूँदों से प्रसन्न होकर क्रीड़ा-मग्न मेढ़क एक-दूसरे को बधाई देते हुए प्रतीत होते हैं। वर्षा हो जाने पर चितकबरे रंग वाला मेढ़क पीले मेढ़क के साथ उछल-उछलकर उसके स्वर में स्वर मिलाता है।' (ऋग्वेद 7/103/4) 'एक मेढ़क दूसरे मेढ़क की टर्राहट को इस प्रकार दोहराता है जैसे गुरु के शब्दों को शिष्य दोहराता है।' (ऋग्वेद 7/103/5) ऐसे अनेक उदाहरणों से यह सुस्पष्ट हो जाता है कि ऋग्वेद में वैदिक ऋषि-मुनियों के पर्यावरण से निकट सामीप्य की अभिव्यंजना सम्यक् रूप से हुई है।

आदिकवि वाल्मीकि पर्यावरण के रोमांचकारी प्रभाव से पूर्णतया परिचित थे। मानवीय भावनाओं के उद्दीपन के लिए उन्होंने जगह-जगह पर प्रकृति का आश्रय ग्रहण किया है। बालकांड में कौशिक ऋषि के संयम को भंग करने की परियोजना बनाता हुआ इन्द्र रम्भा से कहते हैं - 'हे रम्भे! डरो मत। तुम्हारा कोई अनिष्ट नहीं होगा। मेरा आदेश मानो। वसंत काल में किसी मनोहारी वृक्ष पर रमणीय कोयल बनकर जाओ। तब कामदेव के साथ मैं तुम्हारे पास ही स्थित रहूँगा। तुम अपने रूप को जरा सजाकर इस तपस्वी के मन को अपनी ओर आकृष्ट करने की चेष्टा करना।'

'मा भैषी रम्भे! भद्रं ते कुरुष्व मम शासनम्।

उद्दीपन के अतिरिक्त रूप-सौन्दर्य की साज-सज्जा के रूप में भी पर्यावरण का प्रयोग महाकवि वाल्मीकि ने किया है। राजा कुशनाभ की

युवती कन्याओं के सौन्दर्य को प्राकृतिक वैभव से संपन्न करते हुए लिखा गया है - 'रूप-यौवन-संपन्न वे कन्याएँ वर्षाकालीन विद्युत के समान प्रतीत होती थीं। अपने अपूर्व रूप से सजी हुईं वे सर्वांग सुन्दरियाँ वाटिका में आकर ऐसी प्रतीत होती थीं मानो मेघ से छिपी हुई तारिकाएँ हों।' (बालकाण्ड, सर्ग 32)

महाभारत में तत्कालीन पर्यावरण के अनुपम सौन्दर्यश्री में अधिक अभिवृद्धि हुई है। 'शाकुन्तलोपाख्यान' में महर्षि कण्व के आश्रम का संश्लिष्ट चित्रण द्रष्टव्य है - 'वन पुष्पों से युक्त तथा वृक्षों से सुशोभित था। उसमें अत्यधिक सुखदायक हरी-हरी घास लहरा रही थी। अगणित सुन्दर पक्षियों के कलरव और कोयलों की कूक तथा झींगुर की झंकार से वह गुंजायमान हो रहा था।' (आदिपर्व, 70/4,5,6)

इसी प्रकार अद्भुत सौन्दय भारान्वित बाला तप्ता के रूप-वैभव की व्यंजना करते हुए महर्षि वेदव्यास ने लिखा है - 'या तो वह लक्ष्मी है या सूर्य से झड़कर पड़ी हुई उसकी कांति के समान प्रतीत होती है। अंगों की कांति की दृष्टि से वह सूर्य-शिखा तुल्य तथा स्वच्छ सौन्दर्य की दृष्टि से चन्द्ररेखा जैसी प्रतीत होती है। (आदिपर्व, अध्याय 173)

परवर्ती संस्कृत साहित्य में तो पर्यावरण का चित्रण प्रचुर मात्रा में हुआ है। प्रकृति-चित्रण का ऐसा कोई रूप नहीं जो संस्कृत-काव्य-भंडार में सुलभ न हो। कालिदास, दण्डी, श्रीहर्ष आदि की रचनाओं में प्रकृति के मानवीकरण के सैकड़ों उदाहरण उपलब्ध हैं। कवि-कुल-गुरु कालिदास ने तो आषाढ़ के प्रथम दिवस पर भावाभिभूत होकर 'मेघदूत' नामक गीतिकाव्य ही लिखा डाला। उसमें यक्ष-पत्नी अपनी गोदी में वीणा रखकर गाने का प्रयास करती है; किंतु अश्रुधारा से वीणा के तार गीले हो जाने से वह वीणा-वादन करने में असमर्थ रहती है-

'उत्संगे वा मलिनवसने सौम्य निक्षिप्य वीणां
मद्गोत्रांकं विरचितपदं गेयमुद्गातुकामा
तन्त्रीमार्द्रां नयनसलिलैः सारयित्वा कथञ्चिद्
भूयो भूयः स्वयमपि कृतां मूर्च्छनां विस्मरन्ती।'

कालिदास ने 'मेघदूत' में ही गभीरा नदी को किसी मदोन्मत्ता नारी के रूप में चित्रित करते हुए उसकी काम-चेष्टाओं का निरूपण किया है जो मानवीकरण का उत्तम उदाहरण हैं। इसी प्रकार उन्होंने 'ऋतुसंहार' में शरद् को एक नववधू के रूप में चित्रित किया है।

इसी प्रकार महाकवि भारवि, माघ, श्रीहर्ष आदि कवियों ने पर्यावरण का चित्रण इतनी कुशलता से तथा इतने परिमाण में किया है कि महाकाव्य के लक्षणों में इसे एक अनिवार्य लक्षण के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। बाणभट्ट ने 'कादम्बरी' और दण्डी ने 'दशकुमारचरित' जैसी गद्य-रचनाओं में भी पर्यावरण के ऐश्वर्य को यथास्थान आपूरित कर दिया है।

प्राकृत और अपभ्रंश के जैन कवियों ने पर्यावरण का पर्याप्त विस्तार से वर्णन किया है; परंतु उनमें संस्कृत कवियों की उक्तियों का ही अधिकतर पिष्ट-पेषण है। उनमें मौलिकता का अभाव है। अपभ्रंश के परवर्तीयुग्मों में अब्दुर्रहमान खानखाना तथा बब्बर जैसे कवियों ने तत्कालीन पर्यावरण का सम्यक् चित्र खींचा है। 'सन्देशरासक' की विरहिणी नायिका की दशा विभिन्न ऋतुओं में अत्यधिक असहनीय हो जाने पर वह पथिक को संदेश देती हुई कहती है - 'आकाश में चारों ओर बादल छाए हुए हैं। काली घटाओं जोर-जोर से उठती है। आकाश-मार्ग से बिजली चमक रही है।' मेढ़कों की टर्राहट असहनीय हो रही है। धरती पर लगातार मूसलाधार वर्षा होती रहती है। हे पथिक! तुम्हीं बताओ, वृक्षों की चोटियों पर बैठी कोयल के मधुर स्वर की मार कैसे सहन करूँ।'

कविवर बब्बर की पति-वियुक्ता नायिका गर्मी की तपन से व्याकुल होकर किसी के शीतल स्पर्श की अभिलाषा व्यक्त करती है-

'तरुण-तरणि तबइ धरणि, पवण बहइ खरा,
लग णाहि जल वड मरुथल, जण-जिअण-हरा।

अर्थात्, युवा सूर्य भूमि को तपा रहा है। तेज पवन चल रहा है। इस मरुस्थल में कहीं जल का अता-पता नहीं है। लोगों का जीवन विनष्ट हो रहा है। दिशाओं की वायु चल रही है। उनसे मेरा हृदय दोलायमान हो रहा है।

उपरिलिखित निरीक्षण पर दृष्टिपात करने से यह सुस्पष्ट हो जाता है कि वैदिक काल से अपभ्रंश काल तक भारतीय वांग्मय में पर्यावरण का चित्रण निरंतर किया जाता रहा है। वह नाना रूपों और वर्णों में उपस्थित होकर मानवीय अनुभूतियों का प्रकटीकरण करता रहता है। दार्शनिकों ने शताधिक रूपों में प्रकट होने वाले इस पर्यावरण को प्रकृति या माया की अभिधा प्रदान की है।

हिन्दी साहित्य के आदिकाल के रासो आदि ग्रंथों के कवियों ने सौन्दर्य-निरूपण के लिए जहाँ प्रकृति से उपमान लिए हैं, वहीं संयोग-वियोग की अनुभूतियों के उद्दीपन के रूप में अनेक ऋतुओं का वर्णन भी किया है। 'बीसलदेव रासो' की नायिका की वियोग-ज्वाला भादों की बरसात से और भी भड़क उठती है -

'भादवउ बरसइ छह मगहर गंभीर।
जल-थल महीयल सहू भरया नीर।

इसी प्रकार हिन्दी के मध्यकालीन कवियों ने अपनी विरह-गाथा सुनाने के लिए प्रकृति और पर्यावरण का प्रश्रय बार-बार लिया है। कविवर विद्यापति ने अपने काव्य में पर्यावरण को अनेकानेक रूपों में चित्रित किया है। नायिका के रूप-लावण्य को पर्यावरण के अंगराज से अलंकृत करने की कला में जितनी कुशाग्रता एवं कुशलता उनमें है उतनी अन्य किसी कवि में नहीं है। वे पर्यावरण का भिन्न-भिन्न अलंकारों के रूप में प्रयोग करते हैं -

'पीन पयोधर दूबरि गता। मेरु उपजल कनक-लता।।

❋ ❋

सुन्दर वदन चारु अरु लोचन, काजर रंजित भेला।
कनक-कमल माझ भुजंगिनी, श्रीयुत खंजन खेला।।'

पर्यावरण के चित्रण के अन्य रूपों पर दृष्टि डालिए -

फुटल कुसुम नव कुंज कुटीर बन, कोकिल पंचम गावे रे!

विद्यापति के काव्य में मानवीकरण का एक उदाहरण देखिए -

'माइ हे सीत-वसंत बिवाद, कओन बिचारब जय-अवसाद।
दुहु दिसि मधथ दिवाकर भेल, दुजबर कोकिल साखी देल।'

संतकवि कबीर ने अपने काव्य में पर्यावरण का चित्रण इस प्रकार

किया है -

'जैसे जलहिं तरंग तरंगिनी ऐसे हम दिखलावहिंगे।
कहै कबीर सुख-सागर हंसहिं हंस मिलावहिंगे।।'

जगत् की नश्वरता का चित्रण करते हुए वे कहते हैं -

'माली आवत देखि कर कलियाँ करैं पुकार।
फूले फूले चुन लिए कालि हमारी बार।'

साधनापरक अनुभूतियों को प्रकट करने के लिए भी कबीर पर्यावरण से ही उदाहरण देते हैं -

'अन्तर कँवल प्रकासिया, ब्रह्म बास तहाँ होय।
मन भँवरा तहाँ लुबुधिया, जागैंगा जन कोइ।।'

प्रेम का निरूपण करते समय भी जायसी ने पर्यावरण को सादृश्य के रूप में प्रयोग किया है। प्रेमी के रूप में मधुकर का चित्रण देखिए-

'फूल-फूल फिरि पूछौं, जौ पहुँचौं ओहि केत।
तन निछावर कै मिलौं, ज्यौ मधुकर जिव देत।'

महाकवि तुलसी दास ने भी इष्टदेव के अलंकरण में पर्यावरण से ही प्रचलित उपमानों को लिया है। वियोगी राम पर वर्षा, शरद्, वसंत आदि के प्रभाव को यथासंभव चित्रांकित किया है।

इसी प्रकार कृष्णभक्त कवियों ने भी पर्यावरण को प्रधानता देते हुए कविताओं की रचना की है। सूरदास विरचित 'सूर सागर' से एक उदाहरण है -

'केकी कोक कपोत और खग, करत कुलाहल भारी।
मानहुँ लै लै नाउँ परस्पर, देव दिवावत गारी।।
कुंज कुंज प्रति कोकिल कूजति, अतिरस विमल बढ़ी।
मनु कुल-बधू निलज भई, गृह-गृह गावति अटनि चढ़ी।।'

रीतिकाल में भी पर्यावरण का और अधिक प्रश्रय है। बिहारी, सेनापति, देव, पद्माकर आदि कवियों ने पर्यावरण का भली भाँति चित्रण किया है। बिहारी का एक चित्रण -

'लपटी पहुप पराग-पट सनी स्वेद मकरन्द।
आवति नारि नवोढ़ लौं, सुखद वायुगति भेद।।

पद्माकर ने भी पर्यावरण-चित्रण में अपनी असाधारण प्रतिभा का परिचय दिया है -

'भौंरन को गुंजन बिहार बन कुंजन में,
मंजुल मलारन को गावनो लगत है।
कहें 'पद्माकर' गुमान हूँ ते मान हूँ ते,
प्रान हूँ ते प्यारी मन-भावनो लगत है।...
मोरन को सोर घनघोर चहुँ ओर न,
हिंडोरन को वृन्द छवि छावनो लगत है।
नेह सरसावन में मेह बरसावन में
सावन में झूलिबो सुहावनो लगत है।'

आधुनिक कवि भी अधुनातन पर्यावरण से प्रभावित होकर कविताएँ लिख रहे हैं। भारतीय कवियों को प्रकृति निरंतर प्रेरणा प्रदान करती रही है। वह तो वस्तुतः सौन्दर्य का अपरिमित भण्डार है, कल्पना का अद्भुतलोक, अनुभूति का अगाध समुद्र तथा विचारों की अटूट शृंखला है। आधुनिक हिन्दी काव्य में पर्यावरण का चित्रण अत्यधिक सरसता, सूक्ष्मता तथा विशदता से किया गया है। छायावादी कवियों ने तो प्रकृति के माध्यम से पर्यावरण का विशिष्ट चित्रण किया है। जयशंकर प्रसाद का प्रकृति-चित्रण देखिए -

'उषा सुनहले तीर बरसती जयलक्ष्मी-सी उदित हुई।
उधर पराजित काल-रात्रि भी जल में अन्तर्निहित हुई।।'
'पगली, हाँ सम्हाल ले तेरा, छूट पड़ा कैसे अचल।
देख बिखरती मणिराजी, अरी उठा ओ बेसुध चंचल।।'
'सिंधु-सेज पर धरा-वधू अब तनिक संकुचित बैठी-सी।
प्रलय-निशा की हलचल स्मृति में मान किए सी ऐंठी-सी।।'

कविवर सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का पर्यावरण-चित्रण देखिए -

'दिवसावसान का समय
मेघमय असमान से उतर रही है,
वह संध्या सुन्दरी परी-सी,
धीरे, धीरे, धीरे।'

महादेवी वर्मा ने पर्यावरण-चित्रण आत्माभिव्यक्ति के रूप में आत्मविभोर होकर किया है -

'नयन में जिसके जलद वह तृषित चातक हूँ।
शलभ जिसके प्राण में वह निठुर दीपक हूँ।
किसी फूल को उर में छिपाये विकल बुलबुल हूँ।।'

भारतीय ऋषि-मुनियों तथा मनीषियों ने मानव की ज्ञानेन्द्रियों द्वारा अनुभूत जगत के पर्यावरण को प्रकृति की संज्ञा दी है। प्रकृति पल-प्रतिपल अपना स्वरूप परिवर्तित करती रहती है। यह परिवर्तनशीलता ही प्रकृति की असाधारण विशेषता है। पृथ्वी के चराचरों के घटकों में अनादि काल से पारस्परिक सूक्ष्म अन्तःसंबंध रहा है। इसलिए इनके किसी एक घटक के चलायमान होने या विनष्ट होने पर अन्य घटकों में विचलन या विनाश होने लगता है। जैसे वृक्षों के काटने से भूमि ऊसर हो जाती है और रेगिस्तान का विस्तार होने लगता है। फलतः जंगली जीव-जन्तु भी विनष्ट हो जाते हैं।

उपरिलिखित उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि आधुनिक काव्य में मानव तथा पर्यावरण एकाकार हो गए हैं। मानव में पर्यावरण के और पर्यावरण में मानव के रूप-लावण्य का दर्शन उपलब्ध है। आधुनिक कवियों में कथ्य, कथन तथा कथन का साधन दृष्टिगोचर होने वाला पर्यावरण ही है। ब्रह्म के विराट स्वरूप का प्रतिपादन करने के लिए अथवा जीवन संबंधी किसी महत्त्वपूर्ण सिद्धांत को समझने के लिए या अपने किसी गुप्त प्रेम के किसी गोपनीय तथ्य की अभिव्यंजना करने के लिए आधुनिक कवियों ने अपने समक्ष उपस्थित पर्यावरण को ही अभिमंत्रित किया है। उन्होंने तो पर्यावरण के विशिष्ट वैभव के सामने बालाओं के मनोहारी सौन्दर्य तक की अवहेलना कर दी है। प्रकृति के अनूठे चितेरे महाकवि सुमित्रानन्दन पंत के शब्दों में -

'छोड़ द्रुमों की मृदु छाया,
तोड़ प्रकृति से भी माया,
बाले! तेरे बाल-जाल में
कैसे उलझा दूँ लोचन।।'

विश्व के अगणित कवियों ने प्रकृति का चित्रण किया है, परंतु प्रकृति के प्रति जैसा अनन्य अनुराग महाकवि पंत में प्रकट हुआ है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। पर्यावरण उनके लिए काव्य की वस्तु और अलंकरण का साधन नहीं, अपितु उनकी काव्य-प्रेरणा का भी स्रोत रहा है। कविवर पंत ने यह खुलकर स्वीकार भी किया है - 'कवि-जीवन के पहले भी मुझे याद है, मैं घंटों एकान्त में बैठा, प्राकृतिक दृश्यों को एकटक देखा करता था और कोई अज्ञात आकर्षण मेरे भीतर एक अव्यक्त सौन्दर्य का जाल बुनकर मेरी चेतना को तन्मय कर देता था। जब कभी मैं आँख मूँदकर लेटता था तो वह दृश्य-पट चुपचाप मेरी आँखों के समक्ष घूमा करता था।...'

भारतीय वांग्मय के अनेक प्रतिभाशाली कवियों ने पर्यावरण का प्रयोग अनेक रूपों तथा अगणित शैलियों में किया है। उनकी कविताओं में कहीं तो पर्यावरण मूलाधार के रूप में प्रकट हुआ है और कहीं साधन के रूप में। कभी वह हास्य-रुदन का प्रेरक बनता है और कभी अपरिचित से मौनालाप करने वाला तथा कभी दार्शनिक सिद्धांतों को पुष्ट करने वाला होता है। वस्तुतः पर्यावरण कवियों की वाणी है, भाषा है, अलंकृति है, भावना है और है विचारधारा। निःसंदेह विचारों की समस्त निधि, सौन्दर्य का समस्त वैभव तथा गीतों का समस्त माधुर्य प्रतिभाशाली कवियों को अपने पर्यावरण से ही प्राप्त होता है।

भारतीय ऋषि-मुनियों तथा मनीषियों ने मानव की ज्ञानेन्द्रियों द्वारा अनुभूत जगत के पर्यावरण को प्रकृति की संज्ञा दी है। प्रकृति पल-प्रतिपल अपना स्वरूप परिवर्तित करती रहती है। यह परिवर्तनशीलता ही प्रकृति की असाधारण विशेषता है। पृथ्वी के चराचरों के घटकों में अनादि काल से पारस्परिक सूक्ष्म अन्तःसंबंध रहा है। इसलिए इनके किसी एक घटक के चलायमान होने या विनष्ट होने पर अन्य घटकों में विचलन या विनाश होने लगता है। जैसे वृक्षों के काटने से भूमि ऊसर हो जाती है और रेगिस्तान का विस्तार होने लगता है। फलतः जंगली जीव-जन्तु भी विनष्ट हो जाते हैं।

पाश्चात्य अंध स्वार्थ एवं भोग-लिप्सा ने प्रकृति का ऐसा दोहन किया है कि सम्पूर्ण संसार के पर्यावरण का संतुलन अत्यधिक बिगड़ गया है। आज यूरोप के अनेक देशों में प्रदूषण के बाहुल्य के कारण अम्लयुक्त वर्षा होती है जिससे यह स्पष्ट है कि यदि मानव ने सतर्कता से इस पर ध्यान नहीं दिया तो सारा संसार संकटग्रस्त हो जाएगा। प्रकृति तथा जीव-जन्तु वायु-मण्डल में आक्सीजन और कार्बन-डाईआक्साइड का संतुलन बनाए रखते हैं। सभी पेड़-पौधे संश्लेषण क्रिया द्वारा कार्बन-डाई-आक्साइड ग्रहण करके ऑक्सीजन छोड़ते रहते हैं जिससे आक्सीजन और कार्बन-डाई-आक्साइड का संतुलन बना रहता है। परंतु अत्याधुनिक मानव अपनी अल्पज्ञता के कारण संतुलन बिगाड़ता चला जा रहा है।

आधुनिकता तथा विकास के पथ पर बेतहाशा दौड़ता हुआ मानव अपने लिए अनेक संकटों के साथ-साथ पर्यावरण की भयंकर समस्या पैदा कर रहा है। अपरिमित शहरीकरण में भूमि, वृक्ष, वनस्पति, जंगली जीव-जन्तु, नदियाँ, नहरें आदि आए दिन विनष्ट होते जा रहे हैं। पर्यावरण के इन तत्त्वों के विनष्ट होते ही मानवता धराशायी हो जाएगी। इसलिए भूमि के संरक्षक होने के नाते मानव का यह परम कर्तव्य है कि वह प्रकृति के अनेकानेक घटकों के मध्य आन्तरिक सह-संबंधों और जैव-वैविध्य को समझकर उसके स्वाभाविक मानवीय गुणों तथा प्राकृतिक स्वरूप को संरक्षित करते हुए मानवता को उन्नति के उच्चतम शिखर पर पहुँचाए। पर्यावरण के प्रति जागरूक होकर ही मानव आरोग्यपूर्ण एवं सुखमय जीवन व्यतीत कर सकेगा।

(लेखक वरिष्ठ साहित्यकार एवं बहुभाषाविद् हैं)

प्रकृति को नुकसान पहुँचाने का असर जीवन पर

❒ तुषार कांत

शहरों-महानगरों में ऑक्सीजन रहित क्षेत्रों के बढ़ते जाने से लेकर पर्यावरण को निरंतर हो रहे नुकसान की अनेक समस्याएँ खड़ी हो रही हैं। इससे लाखों लोगों का जीवन खतरे में पड़ गया है। ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन ने इन खतरों को अधिक बढ़ाया है। रिपोर्ट में उन कदमों का भी जिक्र किया गया है जो पर्यावरण को संतुलित रखने के लिए निकट अतीत में उठाए गए हैं। इसमें ओजोन की परत को नुकसान से बचाने के लिए होने वाले वैश्विक समझौते, पश्चिमी यूरोप में स्वच्छ हवा और आमेजन के जंगलों की कटाई रोकने संबंधी समझौतों का जिक्र है।

संयुक्त राष्ट्र के महासचिव बान की मून ने 'ग्लोबल इनवायरमेंट आउटलुक' नामक एक अहम रिपोर्ट में कहा है कि 'पर्यावरण के नुकसान से जो क्षति हो रही है, वह हाल के दशक के मानव समाज की कई उपलब्धियों को छोटा बना रही है। यह गरीबी के खिलाफ लड़ी जा रही लड़ाई के महत्त्व को घटा रही है और इससे विश्व शांति और सुरक्षा पर भी असर हो सकता है।' इसी रिपोर्ट में यह दर्शाया गया है कि प्रकृति को लगातार नष्ट किए जाने के कारण लोगों के स्वास्थ्य व समृद्धि में लगातार ह्रास हो रहा है। इस नुकसान के लिए मुख्यतः जंगलों का कम होना, हर प्रकार का प्रदूषण, अधिक मछलियों को मारने, साफ पानी की लगातार हो रही कमी एवं खेती वाली जमीन को हो रही क्षति एवं उसकी ऊर्वरा शक्ति में कमजोरी को जिम्मेदार ठहराया गया है। यह सब स्वच्छ पर्यावरण के प्रति इच्छा शक्ति में कमी के कारण हो रहा है। शहरों-महानगरों में ऑक्सीजन रहित क्षेत्रों के बढ़ते जाने से लेकर पर्यावरण को निरंतर हो रहे नुकसान की अनेक समस्याएँ खड़ी हो रही हैं। इससे लाखों लोगों का जीवन खतरे में पड़ गया है। ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन ने इन खतरों को अधिक बढ़ाया है। रिपोर्ट में उन कदमों का भी जिक्र किया गया है जो पर्यावरण को संतुलित रखने के लिए निकट अतीत में उठाए गए हैं। इसमें ओजोन की परत को नुकसान से बचाने के लिए होने वाले वैश्विक समझौते, पश्चिमी यूरोप में स्वच्छ हवा और आमेजन के जंगलों की कटाई रोकने संबंधी समझौतों का जिक्र है।

एक अनुमान के अनुसार धरती पर पाई जाने वाली लगभग चार करोड़ प्रजातियों में से आजकल रोज दर्जनों प्रजातियों का लोप हो रहा है। नदियों व समुद्र में तेल के रिसाव व पानी में गंदे कूड़े-करकट बहाने के कारण जलीय जीवों का अस्तित्त्व संकट में पड़ता जा रहा है। एक तरफ पीने के पानी की समस्या बढ़ रही है तो दूसरी ओर कहीं सूखा तो कहीं बाढ़ की भयावहता अपना कहर दिखा रही है।

प्रदूषण से उत्पन्न होने वाली गैसें पृथ्वी का तापमान बढ़ाने के साथ-साथ मानव जीवन के लिए रक्षा कवच का काम करने वाली ओजोन परत को भी बड़ी तेजी से छिन्न-भिन्न कर रही हैं। यह परत सूर्य की पराबैगनी किरणों को पृथ्वी पर आने से रोकती है और कैंसर, चर्मरोग जैसी बीमारियों से बचाती है। निरंतर पर्यावरण प्रदूषण से ओजोन परत कमजोर पड़ती जा रही है।

पर्यावरणीय असंतुलन के कारण मौसम व जलवायु में अप्रत्याशित परिवर्तन हो रहा है। अनेक देशों के तापमान व समुद्री जल-स्तर में निरंतर वृद्धि हो रही है। पाकिस्तान, श्रीलंका, बंगलादेश, इंडोनेशिया, मलेशिया, वियतनाम, फिलीपीन सहित भारत में इसका स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर हो रहा है। इसी के कारण गत वर्षों में समुद्री तूफानों ने भयानक तबाही मचायी है। 2004 की सुनामी, 2005 की कैटरिना, 2009 की सीडर, 2010 की लैला, 2011 की आइरिन व नेसाट ने भारत व विश्व को नुकसान पहुँचाया।

पर्यावरण प्रदूषण व असंतुलन ने मनुष्य मात्र ही नहीं, जीव-जंतुओं तक का अस्तित्व खतरे में डाल दिया है। बादल फटना, जमीन खिसकना, भूकंप आना, हिमनद सूखना, उत्तरी-दक्षिणी ध्रुवों की बर्फ लगातार पिघलना विनाश की ओर बढ़ने का संकेत है। घातक बीमारियाँ पनप रही हैं, भोजन ही नहीं, स्वच्छ श्वसन तक की समस्या हो गई है। एक अनुमान के अनुसार, 20वीं शताब्दी में वैश्विक तापमान लगभग 0.6 डिग्री सेंटीग्रेड तक बढ़ गया है।

'मानस' में पर्यावरण

पर्यावरण शब्द परि और आवरण से बना है। इस प्रकार पर्यावरण का अर्थ चारों ओर का आवरण है। इसे वातावरण कहते हैं। भारतीय शास्त्र-ग्रंथों में आकाश, वायु, जल, अग्नि एवं पृथ्वी इस वातावरण के प्रमुख घटक हैं। इन्हीं से आच्छादित स्थितियों में सारे जीव-जन्तुओं और पेड़-पौधों का अस्तित्व है। परंतु पर्यावरण इतने तक ही सीमित नहीं, वरन् मन, मानस व अस्तित्व तक विस्तृत है। इतना ही नहीं, संतुलन-सामंजस्य हर स्तर पर आवश्यक है, इसलिए हमारे सारे कार्य-व्यापार से वातावरण पर प्रभाव पड़ता है। अच्छे व्यवहार का अनुकूल व बुरे व्यवहार का प्रतिकूल असर पड़ता है। इसलिए हम ही नहीं, हमारे आस-पास का माहौल भी रुचिकर हो-ऐसी स्थिति बनानी पड़ती है। तुलसीदास ने मानस में इस स्थिति का चित्रण किया है

सुमन वाटिका सबहिं लगाईं।
विविध भाँति करि जतन बनाईं।।
लता ललित बहु जाति सुहाई।
फूलहिं सदा वसंत की नाईं।

पर्यावरण की कितनी बारीक चिंता इसमें है। जल की शुद्धता के लिए स्थान-स्थान पर तरह-तरह के घाट बने हुए हैं, पशुओं के लिए अलग, पानी भरने के लिए अलग, नहाने के लिए अलग-

दूरि फराक रुचिर सो घाटा।
जहँ जल पिअहिं बाजि गज ठाटा।।
पनिघट परम मनोहर नाना।
तहाँ न पुरुष करहिं अस्नाना।।

पर्यावरण इतने तक ही सीमित नहीं, वरन् मन, मानस व अस्तित्व तक विस्तृत है। इतना ही नहीं, संतुलन-सामंजस्य हर स्तर पर आवश्यक है, इसलिए हमारे सारे कार्य-व्यापार से वातावरण पर प्रभाव पड़ता है।

❐ रंजन कुमार

इतना ही नहीं, सदैव शीतल, सुगंधित वायु का प्रवाह है- 'मारुत त्रिविध सदा बन सुंदर।' इन सबके कारण वातावरण सुखद व मनोहारी बना रहता है। चन्द्रमा संतुलित शीतलता और सूर्य वैसा ही ताप देते हैं। सब कुछ जरूरत के मुताबिक चलायमान है-

फूलहिं फरहिं सदा तरू कानन।
रहहिं एक संग गज पंचानन।।
खग मृग सहज बयरू बिसराई।
सबन्हि परस्पर प्रीति बढ़ाई।।

संपूर्ण पर्यावरण- चेतना इसी संतुलन-सामंजस्य से निर्मित होता है जो प्रकृति के कण-कण के लिए उपयोगी और जरूरी भी है।

लघु कथा

दृष्टिकोण

❐ नरेन्द्र परिहार

सुबह-सुबह पूरा नागपुर शहर मैराथन दौड़ के लिए सजा हुआ था। बच्चे क्या, बूढ़े, क्या स्त्रियाँ सभी रंगबिरंगे कपड़े पहने बर्डी से लेकर कस्तूरचन्द्र पार्क तक अपने-अपने स्टार्टिंग प्वाइंट पर खड़े थे। समय-समय पर दौड़ निर्धारित थी। व्हील चेयर पर दौड़ एक आकर्षण था। कालिया जो मीठा नीम दरबार के पास चादर के तम्बू में रहता था। इस चहलकदमी से जाग गया था और हमेशा की तरह अपना भीख का कटोरा लेकर जीरो माइल पर अपने फटे-मटमैले कपड़े पहने खड़ा था और याचना कर रहा था। लोग उसे दुत्कार रहे थे। कुछ पैसे भी डाल रहे थे। उसने देखा कि कुछ बच्चे भी दौड़ रहे हैं, वह भी इसमें शामिल हो गया, उसने कटोरा जीरो माइल के पीछे छुपा दिया। एक कम्पनी की पीली टी-शर्ट मिल गई। वह भी दौड़ पड़ा और सबके आश्चर्य का ठिकाना तब बना जब वह हॉफ मैराथन पूरी कर गया तो लोगों की नजर उस पर पड़ी, फिर क्या लोगों ने उसे उकसाया व मार्ग दिखाना शुरू किया, वह पन्द्रह वर्षीय बच्चा उस 43 कि.मी. दौड़ में दूसरे नम्बर पर आया। परंतु उसे कोई भी आयोजक मानने को तैयार नहीं था। क्योंकि वह दूसरी दौड़ के स्टार्टिंग पाइंट से आया था, इसलिए नहीं माना गया। कीनिया के धावक का नम्बर लगा। इस पर जो धावक तीसरे नम्बर पर आया था, अपनी टूटी-फूटी इंगिलिश में बोल-'दिस ब्रेव बॉय डिसर्व दिस, माई आवार्ड शुड बी गिवेन टु हिम, आई एम ऑन फोर्थ प्लेस।' और आयोजकों ने कालिया को उत्साहवर्द्धक पुरस्कार के साथ दस हजार नगद दिए। अब कालिया रोज उस टीशर्ट के साथ नागपुर की सड़कों पर दौड़ता दिख जाता है और कीनिया के उस धावक को अपना गुरु मानता है।

औषधीय गुणों से परिपूर्ण हैं पीपल, थिपाचा व नीम

❒ ज्योत्स्ना

वैसे तो पेड़-पौधे एवं जीव-जन्तु एक दूसरे पर आश्रित हैं, पर कुछ पौधे तो प्राकृतिक रूप से हमारे लिए इतने उपयोगी हैं कि इन्हें देव तुल्य या देव स्थान तक कहा जाता है।

पीपल- भगवान श्रीकृष्ण ने इसे गीता में सभी पेड़-पौधों में श्रेष्ठ कहा है। अथर्ववेद में

इसे सुख-समृद्धि व आनंद प्रदाता के रूप में निदर्शित किया गया है। इसके बारे में मान्यता है कि यह ब्रह्मा जी के तप के कारण स्वर्ग लोक से पृथ्वी पर उतरा है। इसलिए इसे पूजनीय माना जाता है। आज भी भारत के कोने-कोने में पीपल के पेड़ों को पूजने, परिक्रमा करने की परंपरा जीवित है। यद्यपि आधुनिक उपयोगितावादी, उपभोक्तावादी एवं बाजारवादी सोच व्यवहार के कारण पीपल के पेड़ों को काटकर नए फलदायी पेड़ लगाए जा रहे हैं। नए पीपल के पेड़ नहीं लगाए जा रहे हैं। पीपल का पेड़ सैकड़ों साल तक अस्तित्व में रहता है और न जाने कितने बिना घर-छत वालों एवं घर-छत बालों के लिए भी आश्रयस्थल प्रदान करता है। यहाँ ठहरने, रुकने मात्र से दैहिक, दैविक, भौतिक तापों से मुक्ति मिल जाती है।

प्राचीन समय में पानी को शुद्ध रखने के लिए जलपात्रों में और सर्प के विष से बचने के लिए स्थान-स्थान पर इसके पत्तों को रखा जाता था। इस प्रकार पीपल अक्षय ऊर्जा का स्रोत है और इसे पर्यावरण की सुरक्षा से जोड़ा गया है।

पीपल को निघण्टु शास्त्र में अजर-अमर जड़ी-बूटी कहा गया है। यानी इसका जितना धार्मिक महत्त्व है, उतना ही औषधीय भी। अपने यहाँ यह परंपरा बेजोड़ है कि जो उपयोगी एवं हितकारी है, वही पूजनीय भी है। यह जहरीली दूषित गैसों का विषपान करता है। दूषित गैसों को नष्ट करने हेतु प्राणवायु निरंतर छोड़ता रहता है। प्राचीन समय में पानी को शुद्ध रखने के लिए जलपात्रों में और सर्प के विष से बचने के लिए स्थान-स्थान पर इसके पत्तों को रखा जाता था। इस प्रकार पीपल अक्षय ऊर्जा का स्रोत है और इसे पर्यावरण की सुरक्षा से जोड़ा गया है।

थिपाचा - दक्षिण भारत के केरल में एक पौधे का पता चला है जिसके पत्ते से तेज गर्मी

थिपाचा आग से झुलसे शरीर को भी राहत पहुँचाता है, जले के निशान को मिटाने में भी सक्षम है। इस पौधे को छत पर या छत के निकट लगाना काफी फायदेमंद हो सकता है। लगातार पानी की बूँदें गिराने के कारण इसके आस-पास काफी नमी और ठंडक रहती है, यदि यह आवासीय स्थानों पर लगाया जाए तो गर्मी में राहत पहुँचाने में यह कारगर भूमिका निभाएगी और एयर कंडीशनर पर भी निर्भरता कम होगी।

के समय पानी टपकता है। जितनी उमस व गर्मी होगी, उतना ही ज्यादा यह पानी टपकाता है। जवाहरलाल नेहरू टॉपिकल बोटैनिक गार्डन एण्ड रिसर्च इंस्टीट्यूट के बगीचे में यह पिछले 12-14 साल से लगा हुआ है। लेकिन पानी टपकाने वाली खासियत का पता अब जाकर चला है। वैज्ञानिकों के अनुसार थिपाचा आग से झुलसे शरीर को भी राहत पहुँचाता है, जले के निशान को मिटाने में भी सक्षम है। इस पौधे को छत पर या छत के निकट लगाना काफी फायदेमंद हो सकता है। लगातार पानी की बूँदें गिराने के कारण इसके आस-पास काफी नमी और ठंडक रहती है, यदि यह आवासीय स्थानों पर लगाया जाए तो गर्मी में राहत पहुँचाने में यह कारगर भूमिका निभाएगी और एयर कंडीशनर पर भी निर्भरता कम होगी।

नीम- नीम पूरे दक्षिण एशिया में फैला ऐसा वनस्पति है जो आसानी से पर्यावरण के अनुकूल बैठता है, इसे भगवान-भगवती का वास स्थान मानकर पूजा जाता है। यद्यपि इसकी छाल, पत्ते, टहनियाँ, फूल, फल सब बहुत तीखे होते हैं; परंतु इसका औषधीय गुण

बहुत ही मीठा होता है, तभी तो कहा जाता है, एक नीम और सौ हकीम बराबर हैं। यह चर्म रोग, दंत रोग, रक्त-विकार, चेचक, मलेरिया, पीलिया, गठिया आदि में रामबाण का काम करता है। पारिस्थितिकीय दृष्टि से यह उच्च तापमान को बर्दाश्त करने वाला पेड़ है। जहाँ तापमान उच्च हो और सूखेपन की स्थिति हो, वहाँ भी नीम छाया प्रदान करता है। यह नाजुक पेड़ नहीं है।

गंगा स्नान

❒ आचार्य श्रीराम शर्मा

भागीरथ और उनकी भागीरथी

पौराणिक गाथा के अनुसार, भागीरथ के पूर्वजों को शाप लगा था और वे जलकर भस्म हो गए थे। मरने के उपरांत भी उन्हें सद्गति नहीं मिली। वे नरकगामी हुए। उपाय यह बताया गया कि स्वर्ग से गंगा अवतरित होकर आए और उस स्थान पर होती हुई बहे, जहाँ वे भस्म हुए थे, तो उन पितरों की सद्गति संभव होगी।

राजकुमार भागीरथ राजघरानों में उत्पन्न हुए अन्य विलासी लड़कों की तरह न थे, जिन्हें सुरा-सुन्दरी की नारकीय अग्नि में अपने चढ़ते यौवन को जला डालने की उतावली रहती है। यों बड़े आदमियों के पीछे कुसंग भी दुर्भाग्य की तरह पीछे पड़ा रहता है, पर मनस्वी भागीरथ का संस्कारवान मन भटका नहीं, विचारशीलता ने उसे जीवन समस्याओं को ध्यान में रखने की प्रेरणा दी।

पूर्वजों के प्रति अपने कर्तव्य की बात भागीरथ सोचा करते। शाप से पितरों के भस्म होने के कारण उनके कुल का गौरव घट गया था। वे चाहते थे कि ऐसा आदर्श पथ अपनाया जाए जिससे वह खोया हुआ सम्मान पुनः प्राप्त हो। दुष्कर्म स्वतः ही एक शाप है, जो उन्हें करता है, वह भस्म हुए बिना नहीं रहता। फिर अपयश का नरक तो उन्हें मिलता ही है। पूर्वज इस प्रकार की भूल कर चुके थे, अब बिगड़ी बात बनानी हो तो आदर्श सत्कर्म करने व श्रेष्ठता के पथ पर चलने का मार्ग ही शेष था। यदि दुष्कर्मों का फल नरक है तो सत्कर्म स्वर्ग भी तो दे सकते हैं। गंगा को पृथ्वी पर लाने का पुण्य उन्हें ही नहीं, उनके पूर्वजों को भी सद्गति प्रदान कर सकता है, तो जीवन उसी कार्य में क्यों न लगा दिया जाए, भागीरथ निरंतर यही सोचते रहते।

सोचना बहुत कुछ और करना कुछ नहीं, यह दुर्बल मनोभूमि के पुरुषों का मार्ग है। मनस्वी लोगों को जो उचित और उपयुक्त प्रतीत होता है, उस पर वह चलने के लिए कटिबद्ध भी होते हैं। साहस के सामने बेचारी कठिनाइयाँ कितनी देर ठहर पाती हैं, उन्हें रास्ता देना ही पड़ता है। भागीरथ ने गंगा को स्वर्ग से पृथ्वी पर लाने का अपना निश्चय जब परिजनों को सुनाया तो वे अवाक् रह गए। इतना बड़ा काम, इतना छोटा लड़का कर सकेगा, इस पर उन्हें विश्वास न होता था। आरंभ में सभी ने एक स्वर में असहमति प्रकट की और मार्ग की बाधाओं को बताते हुए निरुत्साहित किया, पर जैसा कि सदा से होता आया है, वह यहाँ भी हुआ। दृढ़ निश्चय के आगे सब झुकते हैं और अन्ततः समर्थन भी मिलता है और सहयोग भी।

भागीरथ घर से चल पड़े और हिमालय पर जाकर तप करने लगे। हिमि के देवता शंकर का हृदय पसीजा। उन्होंने अपने मस्तक में निवास करने वाली गंगा को मरुभूमि में प्रवाहित होने की व्यवस्था कर दी। आधुनिक बुद्धिवादी कहते हैं कि शिवलिंग पर्वत के गर्भ में अपरिमेय जल की यह अजस्र-धारा-गंगा छिपी पड़ी थी। तपस्वी भागीरथ ने एक तपस्वी इंजीनियर के रूप में उसे खोजा और उसे मरुभूमि में ले जाने के लिए अवरोध-भागों को तोड़-फोड़ कर भगवती जाह्नवी को मैदान में उतारने में सफलता प्राप्त कर ली।

जो हो, भागीरथ अपने लक्ष्य में सफल हुए। यह तप उन्हें बहुत लंबे समय तक करना पड़ा और दुर्गम प्रदेश की कठिनाइयों ने उनके शरीर को जीर्ण-शीर्ण भी कर डाला, पर इससे

क्या? मनुष्य शरीर की सार्थकता बहुत दिन जीने या ऐश आराम करने में नहीं, वरन् इस बात में है कि यश को उज्ज्वल बनाने वाला कोई सत्कार्य उससे बन पड़े। युवावस्था का महत्त्वपूर्ण भाग गंगावतरण के पराक्रम में लगाकर भागीरथ ने खोया कुछ नहीं, पाया बहुत कुछ। शाप पीड़ित पूर्वजों को सद्गति मिली, वे स्वयं यशस्वी हुए और सबसे बड़ी बात यह हुई कि उनके सत्प्रयत्न द्वारा अवतरित गंगा में अब तक कोटि-कोटि प्राणियों ने अपनी क्षुधा तृष्णा और अशांति मिटाते हुए समृद्धि और शांति का आनन्द लाभ किया।

भागीरथ आज हम लोगों के बीच मौजूद नहीं हैं। काल की कराल गति ने उन्हें भी नियत अवधि से अधिक यहाँ नहीं रहने दिया। फिर वे अमर हैं। भगवती भगीरथी अपने कल-कल नाद में उस महातपस्वी के पुरुषार्थ का निरंतर गुणगान करती रहती हैं। जीवन ऐसे ही लोगों का धन्य है, यों वासना और तृष्णा के कीचड़ में कुलबुलाते हुए कीड़ों की तरह जिन्दगी को हम लोग भी किसी तरह पूरी कर ही लेते हैं।

गंगास्नान का माहात्म्य

गंगा स्नान का पर्व था। भारी भीड़ स्नान का पुण्य लाभ करने के लिए जा रही थी। सभी गंगा माता की जय बोल रहे थे। शंकर पार्वती सूक्ष्म शरीर से आकाश मार्ग से उधर होकर निकले। पार्वती ने इतनी भीड़ को एक ही दिन गंगा स्नान के लिए जाने पर आश्चर्य व्यक्त किया और शंकर जी से इसका कारण पूछा।

शंकर जी ने कहा- आज सोमवती अमावस्या पर्व है। शास्त्रों में इस पर्व का बहुत माहात्म्य बताया गया है और स्नान करने वाले स्वर्ग जाते हैं, ऐसा लिखा है। इसी कारण हर पर्व पर इतने लोग गंगा स्नान को आते हैं। पार्वती जी का असमंजस और भी अधिक बढ़ गया। उन्होंने कहा कि स्वर्ग से तो हम लोगों का संपर्क निरंतर रहता है। वहाँ तो थोड़ी जगह है। इतने लोग हर पर्व पर आते हैं, हर साल कई-कई लोग डुबकी लगाते हैं। सौ वर्ष में उनकी संख्या इतनी हो जाएगी, जितनी के लिए वहाँ खड़े होने की भी जगह नहीं है, इसलिए यह माहात्म्य गलत मालूम पड़ता है। साथ ही शास्त्र लिखने वाले ऋषि झूठ क्यों बोलेंगे? यह बात भी समझ में नहीं आती। देव! इस सन्देह का निवारण कीजिए।

शिवजी बोले, देवी! स्नान के साथ मन को स्वच्छ बनाने की भी शर्त है। उसका पालन यह स्नान करने वाले नहीं करते। ऐसी दशा में वे मेला मनोरंजन-भर कर पाते हैं। उस पुण्य के भागीदार नहीं बनते जो शास्त्रकारों ने स्वर्ग जाने के रूप में कहा है।

पार्वती जी की शंका का निराकरण न होते देखकर शिवजी ने उन्हें उदाहरण प्रस्तुत करते हुए वस्तुस्थिति समझाने की बात सोची। उन्होंने एक नाटक रचा। जिस रास्ते दर्शनार्थी जा रहे थे, उसी से सटकर दोनों वेश बदल कर बैठ गए। शिवजी ने वयोवृद्ध कोढ़ी का रूप बनाया। पार्वती को असाधारण सुन्दरी बनाकर पास में बिठा लिया।

इस विचित्र जोड़े को देखकर दर्शनार्थी पूछते कि आप लोग कौन हैं? यहाँ किस प्रयोजन से बैठे हैं? पूर्व गढ़न्त के अनुसार पार्वती कहतीं, ये वृद्ध मेरे पति हैं। इनकी इच्छा गंगा स्नान की हुई। अंग इनके काम नहीं देते सो इन्हें मैं अपनी पीठ पर लादकर यात्रा पूरी कर रही हूँ। बहुत थक जाने के कारण हम लोग यहाँ बैठे सुस्ता रहे हैं। जल्दी ही शेष यात्रा फिर आरंभ करेंगे। कल ही तो सोमवती अमावस्या है।

पूछने वालों में से अधिकांश की कुटिल दृष्टि थी। इशारों-शब्दों से उनमें से प्रत्येक ने अपने-अपने ढंग से एक ही परामर्श दिया कि इस बुड्ढ़े को गंगा में छोड़ देना चाहिए और रूपसी को उनके साथ चलना चाहिए। उनके लिए हर प्रकार की सुख-सुविधा उपलब्ध कराई जाएगी, चैन की जिन्दगी कटेगी। इन परामर्शों को सुनते-सुनते पार्वती हैरान हो गई कि यह कैसे धर्मात्मा लोग हैं? वे भी गंगा पर स्नान करने जा रहे हैं। इनके मन इतने कलुषित हैं तो धर्माडम्बर रचने से क्या लाभ? पार्वती जी पूछ बैठी- नाथ, क्या सभी धर्माडम्बरी ऐसे ही होते हैं? इस पर शिवजी बोले, हाथ की पाँचों उंगली एक समान नहीं होती। इस भीड़ में कुछ सच्चे लोग भी होते हैं। वह भी तुम्हें देखने को मिलेंगे।

प्रतीक्षा के बाद एक भावुक भक्त उधर आया। ध्यानपूर्वक इस पति-पत्नी की परिस्थिति और मनोदशा परखता रहा। गद्गद् हो गया। सुन्दरी के पद वन्दन करता हुआ बोला, देवी, तुम धन्य हो। तुम्हारी जैसी नारियों की धर्म भावना से यह धरती आकाश अपनी जगह पर स्थित है, मैं कुछ आप लोगों की सेवा करना चाहता हूँ। मेरे पास कुछ सत्तू है। इसे आप लोग भी ग्रहण करें। भूखे होंगे न? इसके बाद वृद्ध सज्जन को मैं अपनी पीठ पर बिठा कर गंगा स्नान कराऊँगा। आप कहेंगी तो आपके घर तक भी इन्हें पहुँचा आऊँगा। शिवजी ने पार्वती से कहा- देखा, इतनी भीड़ में केवल यह आदमी तीर्थ सेवन की शर्त की पूरी कर रहा था। यही है वह जिसको स्वर्ग जाने का प्रतिफल मिलेगा, जिसका वर्णन गंगा स्नान के संबंध में ऋषि-मनीषियों ने किया है।

लघुता ही विराट है

❑ शिव कुमार तिवारी

सज्जनों से मिलना ही सत्संग कहलाता है। सत्संग से व्यक्ति धन्य हो जाता है। दरअसल प्राचीन काल से ही साधु के मिलने या सत्संग जब गिरते वक्त होता है तब वह लोकोत्तर होता है जैसे रामचरित मानस में देवी लंका और हनुमान जी का मिलन है, इस वर्णन में हनुमान जी ने कर्तव्यपरायण लंका देवी को एक भरपूर घूँसा मारा जो इस प्रकार था- 'मुस्टिक ताहि एक कपि हनी, रूधिर बमत धरणी ढनमनी'। जब घूँसे से पीड़ित देवी लंका गिर गईं, तब उन्हें तुरंत पता चला कि सत्संग वास्तव में होता क्या है। भयानक चोट लगने के बाद वास्तव में बुद्धि तीव्र हो जाती है। यह मैंने भी अनुभव किया है कि इस समय दिमाग के सारे कपाट खुल जाते हैं और तब गिरने से प्राप्त उस परम पुण्य की अनुभूति को तुलसीदास लिखते हैं -

'तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला इक संग।
मिलै न ताहि सकल मिली, जो पावै सत्संग।।

वास्तव में अलौकिक है गिरने और सत्संग का संयोग। वे सभी धन्य हैं जो गिरे।

गिरने के बाद उठना प्राचीन काल से ही एक बड़ा आध्यात्मिक और शारीरिक समस्या रही है। लोगों के जीवन में यह समस्या साधारण तौर पर अलग-अलग आती है; परंतु हमारे धार्मिक ग्रंथों में ऐसे लोगों का वर्णन है जो एक साथ दोनों प्रकार की समस्या से पीड़ित हुए।

वाल्मीकि रामायण और तुलसीदास जी के रामचरितमानस में मिश्रित समस्या भगवान श्रीराम के बाण लगने पर बाली के गिरने के रूप में वर्णित है। शारीरिक समस्या के रूप में तो स्पष्ट था कि बाण लगा और बाली गिरे, पर जब वे गिर गए और उनसे उठते न बना, तब जैसा कि सदा से होता आया है, शारीरिक अक्षमता के बाद बुद्धि के द्वार खुले और कहने लगे 'कारण कवन नाथ मोहि मारा।' यहाँ पर इसका अर्थ है, 'प्रभु मुझे क्यों गिरा दिया।' प्रभु रामचन्द्र जी ने कहा- 'तुमने अपने छोटे भाई की पत्नी को छीन लिया, यह अधर्म है और इसलिए मेरे बाण ने भले ही तुम्हें गिरा दिया हो पर नैतिक रूप से तुम पहले से ही बहुत गिरे हुए आदमी हो।' (जनजातीय समाज में आज भी स्त्री के पति का छोटा भाई तो बड़े भाई की मृत्यु पर उससे विवाह कर सकता है, पर बड़े भाई को यह अधिकार नहीं है।)

जिस तरह गिरना शारीरिक और आध्यात्मिक समस्या रही, उसी तरह पूरी तरह से न गिर पाना भी एक समस्या रही है जिससे महान चरित्र जूझते रहे हैं। रामायण के अनुसार बाली के मरने के पश्चात् सुग्रीव को अपनी पत्नी तो मिली ही, बाली की पत्नी या उसकी भाभी भी पत्नी के रूप प्राप्त हो गई। दो-दो सुन्दर अनुभवी पत्नियों को पाने के पश्चात् सुग्रीव संयोग शृंगार में ऐसे डूबे कि वे श्रीराम की सहायता देने का वचन भूल गए।

उधर लक्ष्मण ने श्रीराम से कहा, 'भइया, यह सुग्रीव कितना गिरा हुआ आदमी है जो अपने द्वारा दिए बचन को भूल गया। श्रीराम सर्वज्ञ थे, बोले, 'लक्ष्मण, वह गिरने की कगार पर अवश्य है, पर अब तक गिरा हुआ तो निश्चित रूप से नहीं है।' लक्ष्मण जी क्रोध में थे, बोले, 'प्रभु आपकी आज्ञा हो तो उसे बाण मारकर गिरा दूँ।' रामचन्द्र जी ने हँसकर कहा, 'लक्ष्मण शांत हो जाओ तथा गिरते हुए को और मत गिरने दो, वहाँ जाकर देखो, वस्तु स्थिति क्या है।'

जब तमतमाये लक्ष्मण सुग्रीव के महल के सामने पहुँचे, तब सुग्रीव सिटपिटाये, उस समय वे तारा के साथ शयन कक्ष में थे, सो उसी को लक्ष्मण के सामने भेज दिया। महर्षि वाल्मीकि का यह वर्णन बड़ा ही सजीव है-

सा प्रस्खलन्ती मद विह्वलाक्षी
प्रलंबकाञ्ची गुण हेमसूत्रा
सुलक्षणा लक्ष्मण सनिधानं।
जगाम तारा नमिताङ्ग यष्टिः।

अर्थात् सुग्रीव के ऐसा कहने पर शुभलक्षणा तारा लक्ष्मण के पास गई। उसकी पतली काया स्वाभाविक संकोच एवं विनय से झुकी हुई थी उसके नेत्र मद (शराब पीने) से चंचल हो रहे थे, पैर लड़खड़ा रहे थे और करधनी के सुवर्णमय सूत्र लटक रहे थे।

अब बेचारे लक्ष्मण जी क्या करते, क्या कहते? उन्होंने तारा को देखकर सिर झुका लिया, 'सतां समीक्ष्यैव हरीशपत्नीं तस्थावुदासीन तया महात्माण...।। अर्थात् वानर राज की पत्नी तारा पर दृष्टि पड़ते ही महात्मा लक्ष्मण मुँह नीचा करके उदासीन भाव से खड़े हो गए।

उनके सामने सुन्दरी तारा में शराब पीने के फलस्वरूप आत्म विश्वास जगा और वह उसी अवस्था में लक्ष्मण जी से बात करने लगी।

'स पान योगाश्च निवृत्त लज्जा
दृष्टि प्रसादाच्च नरेन्द्र सुनुः।

मधुपान के कारण तारा की नारी सुलभ लज्जा निवृत्त हो गई थी, उसे राजकुमार लक्ष्मण की दृष्टि में कुछ प्रसन्नता का आभास मिला।

भला हो शराब का जिसके नशे में रहते हुए देवी तारा ने सुग्रीव का पक्ष तर्क के साथ रखा और लक्ष्मण ने उन्हें क्षमा कर दिया। इस तरह सुग्रीव गिरते गिरते बच गए।

उसी प्राचीन काल से आयुर्वेद में द्राक्षासव का सेवन आध्यात्मिकता के विकास के लिए आवश्यक बतलाया जाने लगा। कहते हैं कि नैतिक या शारीरिक रूप से गिरने के पश्चात् किया गया सुरापान मनुष्य को पतन प्रतीति के हीन भाव से बचा लेता है।

प्राचीन सिक्कों पर नारी आकृतियाँ

❑ डॉ. संतोष कुमार वाजपेयी

भारतीय सिक्कों पर नारी को देवी तथा स्त्री दोनों रूपों में सम्मान देकर प्रदर्शित किया गया है। मातृदेवी की पूजा इस देश में हड़प्पा संस्कृति के युग से होती रही है। सिक्कों पर इस देवी को समृद्धि की आराध्या के रूप में मान्यता मिली। सिक्कों पर बनी हुई नारी की आकृतियों से विभिन्न युगों में अलंकरण, वेश प्रसाधन, वस्त्रविन्यास आदि के स्वरूप का भी पता चलता है।

सर्वप्रथम सिक्कों पर देवी पार्वती तथा लक्ष्मी का अंकन मिलता है। इसके अतिरिक्त सरस्वती, भूदेवी तथा लक्ष्मी इन तीनों को संयुक्त रूप से प्रदर्शित किया गया है। इन सिक्कों का समय ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी है।

ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी के बाद विभिन्न जनपदों तथा नगरों के सिक्कों पर अनेक देवियों का अंकन मिलता है। यौधेय सिक्कों पर षष्ठी देवी को रोचक ढंग से दिखाया गया है। कुछ सिक्कों पर वह कमल के ऊपर खड़ी हैं। उनका दायाँ हाथ ऊपर उठा है तथा बायाँ हाथ कमर पर है। देवी समभंग, द्विभंग अथवा त्रिभंग मुद्राओं में खड़ी हैं। वह साड़ी पहने हैं। उनके मस्तक पर ललाटिका आभूषण है। कुणिन्द, अग्रोदक और राजन्य जनपदों के सिक्कों पर लक्ष्मी प्रदर्शित हैं। कुणिन्द सिक्कों पर लक्ष्मी अपने बायें हाथ से हिरन को पत्ती खिला रही हैं तथा उनके दायें ऊपर उठे हुए हाथ में पुष्प हैं।

ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी से चौथी ईसवी के मध्य अनेक नगरों ने अपने सिक्के चलाये थे। तक्षशिला के ताँबे के सिक्के में लक्ष्मी स्थानक मुद्रा में हैं। उनके दोनों हाथ पूजा की मुद्रा में ऊपर उठे हैं। वह लंबा कुर्ता पहने हैं तथा कानों में कुण्डल धारण किए हुए हैं। पंचाल के सिक्कों पर भद्रादेवी तथा फाल्गुनी देवी की आकृतियाँ बनी हुई हैं। मथुरा के सिक्कों पर लक्ष्मी को कमल पुष्प लिए हुए दिखलाया

गया है। दूसरा स्वरूप गजाभिषक्त लक्ष्मी का मिलता है। देवी के दोनों तरफ एक-एक हाथी हैं जो जल छिड़ककर उनका अभिसिंचन कर रहे हैं। इस प्रकार के सिक्के अयोध्या, उज्जैन आदि नगरों से भी मिले हैं। एरण से पकी मिट्टी की बनी हुई गुप्तकालीन एक मुद्रा मिली है जिसके ऊपरी अर्द्ध भाग पर प्रभामंडल से युक्त गजलक्ष्मी खड़ी हुई हैं। देवी का एक हाथ जंघा पर है तथा दूसरा हाथ ऊपर को उठा है। इस मुद्रा के निचले अर्द्ध भाग पर ब्राह्मी लिपि का लेख है-'ऐरिकिणे गोमिक विषयाधिकरणस्य', अर्थात् यह ऐरिकिण, वर्तमान एरण के गोमिक विषय के अधिकारी की मुद्रा है। विदिशा तथा त्रिपुरी से प्राप्त सातवाहन सिक्कों पर भी लक्ष्मी को खड़े हुए दिखलाया गया है।

ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी के बाद भारत में अनेक विदेशी शासकों ने अपने सिक्के चलाये। हिन्द-यूनानी शासकों के सिक्के सोना, चाँदी, ताँबा आदि धातुओं के बनते थे। सोने के सिक्के बैक्ट्रिया क्षेत्र में प्रचलित हुए थे। इन सिक्कों पर यूनान, ईरान तथा रोम की प्रमुख देवियों को दिखलाया गया है। जैसे शिकार की देवी अर्तेमिस, बुद्धि व शक्ति की देवी पल्लस, विजय की देवी नाइकी, कृषि व फल-फूल की रक्षक देवी दिमीटर तथा पृथ्वी की देवी हिकाटे इत्यादि। यूनानी सिक्कों पर सर्वप्रथम उनकी रानियों की आकृति भी मिलती है। अगाथोक्लिआ, लओडिक, केलिओप आदि रानियों को प्रदर्शित किया गया है।

बाद में शकों और कुषाणों ने भी अपने सिक्कों पर अनेक देवियों को प्रदर्शित किया है। शक राजा राजुबुल तथा उसके पुत्र षोडास के सिक्कों पर भारतीय देवी लक्ष्मी तथा गजलक्ष्मी के अंकन को महत्त्व दिया गया। पहली-दूसरी शताब्दी ईसवी में कुषाणों ने भारत में सर्वप्रथम अपने सोने के सिक्के चलाये। उन पर उपज

हिन्द-यूनानी शासकों के सिक्के सोना, चाँदी, ताँबा आदि धातुओं के बनते थे। सोने के सिक्के बैक्ट्रिया क्षेत्र में प्रचलित हुए थे। इन सिक्कों पर यूनान, ईरान तथा रोम की प्रमुख देवियों को दिखलाया गया है। जैसे शिकार की देवी अर्तेमिस, बुद्धि व शक्ति की देवी पल्लस, विजय की देवी नाइकी, कृषि व फल-फूल की रक्षक देवी दिमीटर तथा पृथ्वी की देवी हिकाटे इत्यादि। यूनानी सिक्कों पर सर्वप्रथम उनकी रानियों की आकृति भी मिलती है। अगाथोक्लिआ, लओडिक, केलिओप आदि रानियों को प्रदर्शित किया गया है।

की देवी अर्दोक्षो, युद्ध की देवी नना, समृद्धि की देवी रिहे, पृथ्वी की देवी शओगओ, विजय की देवी ओएनिन्डो आदि को दिखलाया गया है।

चौथी से छठी सदी ईसवी के मध्य गुप्त शासकों ने अपने स्वर्ण सिक्कों में लक्ष्मी को सर्वाधिक महत्त्व दिया। उन्हें कमल के ऊपर बैठे हुए अथवा खड़े हुए और सिंहासन पर बैठे हुए बनाया गया है। देवी मयूर फल खिलाते हुए अथवा स्वर्ण मुद्राएँ बिखेरते हुए प्रदर्शित हुई हैं। सिंहवाहिनी देवी का स्वरूप भी अत्यंत रोचक है। विशेष उल्लेखनीय गुप्त सम्राटों की रानियों की आकृतियाँ हैं। चन्द्रगुप्त प्रथम की रानी कुमारदेवी प्रभामण्डल से युक्त खड़ी हैं। वह साड़ी, उत्तरीय, कुण्डल, हार, कंकड़ आदि वस्त्राभूषण पहने हैं। ये सिक्के विवाह के अवसर पर सम्राट ने चलाये थे। समुद्रगुप्त ने अश्वमेध यज्ञ के अवसर पर जो सिक्के बनवाये थे, उन पर उसकी रानी दत्तदेवी चटाई के ऊपर खड़ी हैं। वह साड़ी, चोली, कुण्डल, हार, भुजदण्ड, कंकड़ आदि वस्त्राभूषण पहने हैं। उनके दाएँ कंधे के ऊपर चँवर है तथा वह बाएँ हाथ में तौलिया लिए हुए हैं। ब्राह्मी लिपि में 'अश्वमेध पराक्रमः' लिखा हुआ है। चन्द्रगुप्त के सिक्कों पर उनकी रानी ध्रुवदेवी ललितासन मुद्रा में पर्यंक के ऊपर बैठी हैं। कुमारगुप्त के सिक्कों पर भी उनकी रानी खड़ी हैं। कुमारगुप्त प्रथम के अप्रतिम प्रकार के एक सिक्के पर राजा और सेनापति के साथ रानी खड़ी हैं। रानी वितर्क मुद्रा में राजा को कोई बात समझाते हुए दिखायी गयी हैं। रानी के सिर पर बालों का जूड़ा है। गुप्तकाल में नदी देवी गंगा को पर्याप्त महत्त्व मिला। सिक्कों पर उन्हें मकर के ऊपर खड़े हुए दिखलाया गया है। वह साड़ी, चोली, कुण्डल, हार, भुजबंध, कंकड़, कड़ा आदि वस्त्राभूषण धारण किए हुए हैं।

वर्द्धन वंश का शासक श्रीहर्ष (606 से 647 ईसवीं) शैव धर्मावलंबी था। उसके एक स्वर्ण सिक्के पर शिव के साथ पार्वती को दिखलाया गया है। दोनों नंदी पर आसीन हैं। पार्वती ललाटिका, कुण्डल, हार आदि आभूषण पहने हैं। इस सिक्के पर 'परम भट्टारक महाराजाधिराज श्री महाराज हर्षदेव' लिखा है।

उत्तर गुप्त तथा पूर्व मध्यकाल में लक्ष्मी का अंकन सिक्कों पर अधिकाधिक हुआ है। बंगाल के शासक समचर देव, जयगुप्त तथा शशांक के स्वर्ण सिक्कों पर लक्ष्मी अथवा गजलक्ष्मी का स्वरूप मिलता है। समचरदेव के एक प्रकार के सिक्के में अग्रभाग पर राजा आसन पर बैठे हैं। उनके दोनों तरफ एक-एक परिचारिका खड़ी हैं। पृष्ठ भाग पर देवी सरस्वती

दिल्ली के तुगलक शासक (1320-1412), प्रांतीय मुसलमान राज्य (तेरहवीं से सोलहवीं सदी) तथा मुगल शासकों (1526-1857) के सिक्के पर नारी चित्रण नहीं मिलता है। केवल नूरजहाँ के नाम के कुछ सिक्के आगरा, अहमदाबाद और लाहौर में जारी किए गए थे। सोने और चाँदी के बने हुए ये सिक्के जहाँगीर ने चलाए थे। उन पर 'नूरजहाँ बादशाह बेगम' लिखा है। इन सिक्कों से मुगल प्रशासन में नूरजहाँ का प्रभाव का पता चलता है। अकबर के शासन काल में कुछ सिक्के 'रामसिया प्रकार' के चलाये गये थे। उन पर नागरी तथा फारसी लिपियों में लेख हैं। साथ ही सीता की आकृति बनी हुई है।

अपने वाहन हंस के साथ प्रदर्शित हैं। नौवीं से बारहवीं सदी के मध्य कलचुरी, चंदेल, परमार, गाहड़वाल, तोमर, चाहमान आदि राजवंशों के शासकों ने अपने सिक्कों पर चतुर्भुजी लक्ष्मी को आसीन मुद्रा में दिखलाया है। वह कमल के ऊपर पद्मासनस्थ हैं। उनके ऊपरी दोनों हाथों में कमल पुष्प हैं। निचले दो हाथ जंघा के अगल-बगल में रखे हैं। वह हार, कुण्डल, भुजबंध, मेखला, कड़े आदि आभूषण पहने हैं। दिल्ली के सुल्तान मुहम्मद बिन साम ने भी सोने के अपने सिक्कों पर यही अंकन करवाया था। कश्मीर की रानियों, सुगन्धा और दिद्दा ने भी अपने सिक्कों पर लक्ष्मी के इसी प्रकार के अंकन को महत्त्व दिया है।

दिल्ली के तुगलक शासक (1320-1412), प्रांतीय मुसलमान राज्य (तेरहवीं से सोलहवीं सदी) तथा मुगल शासकों (1526-1857) के सिक्के पर नारी चित्रण नहीं मिलता है। केवल नूरजहाँ के नाम के कुछ सिक्के आगरा, अहमदाबाद और लाहौर में जारी किए गए थे। सोने और चाँदी के बने हुए ये सिक्के जहाँगीर ने चलाए थे। उन पर 'नूरजहाँ बादशाह बेगम' लिखा है। इन सिक्कों से मुगल प्रशासन में नूरजहाँ का प्रभाव का पता चलता है। अकबर के शासन काल में कुछ सिक्के 'रामसिया प्रकार' के चलाये गये थे। उन पर नागरी तथा फारसी लिपियों में लेख हैं। साथ ही सीता की आकृति बनी हुई है।

दक्षिण में हैदर अली (1761-1782) तथा मैसूर के राजा कृष्ण राज (1799-1868) के सिक्कों पर पार्वती का अंकन मिलता है। उन्हें शिव के साथ बैठे हुए दिखलाया गया है। ईस्ट इंडिया कंपनी के सिक्कों पर चतुर्भुजी देवी तथा कमल पुष्प लेकर खड़ी हुई देवी की आकृतियाँ मिलती हैं। शिव के साथ पार्वती को भी दिखलाया गया है। रानी विक्टोरिया (1837-1901) का युवा स्वरूप तथा मुकुट पहने हुए उनकी आवक्ष आकृति मिलती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सिक्कों पर इंदिरा गाँधी (1917-1984) की आकृति अत्यंत प्रभावोत्पादक ढंग से बनायी गयी। वर्षा सिंचित खेती वाले (1888) सिक्कों पर एक स्त्री को कृषि कार्य करते हुए दिखलाया गया है।

विश्व खाद्य दिवस (16 अक्टूबर 1990), छोटा परिवार सुखी परिवार (1993), पच्चीसवीं स्वातंत्र्य जयंती (1947-1972) आदि विभिन्न अवसरों पर सिक्के चलाये गये हैं। इन सब पर नारी-रूपों का प्रदर्शन है। इससे पता चलता है कि अर्थ के साथ स्त्री का सदियों से अभिन्न संबंध रहा है।

डॉ. रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' की दो कविताएँ

क्यों पर्यावरण विनाशमुखी?

ये गीत तुम्हारे लिए लिखे
गाओ सरगम की चाल दिखे
मैंने वसंत के फूलों से
भावों का बाग सजाया है।
ज़हरीली गैसें फैलाकर?
तुम मत इसको बर्बाद करो।
हो प्यार गाँव की माटी से
नदियों की मनहर घाटी से
रहने दो हरे-भरे जंगल,
खग-कुल का जिनमें हो कलरव
त्यागो हिंसा की मनोवृत्ति
पशुओं को भी आज़ाद करो।

गंगा धरती पर बहने दो
यमुना को निर्मल रहने दो
गंदा न करो सरयू-पानी
कृष्ण-कावेरी स्वच्छ बहें
नर्मदा-वेग को मत रोको
बाँधों को व्यर्थ-विवाद हरो।

श्रावण-होली-दीवाली का
त्योहार ईद खुशहाली का
हों स्वच्छ पंथ, सीमित ध्वनियाँ
पथिकों को निर्भय चलने दो
मत करो दिशाओं को बहरा
मत नभ में भीषण नाद करो।

कूड़े-कचड़ों के ढेर लगे
बढ़ रहे रोग, सुख-चैन भगे।
केवल शासन का दोष नहीं,
तुम भी इसके उत्तरदायी
क्यों पर्यावरण विनाशमुखी?
जागो, खुद को संवाद करो!

ओ विज्ञानी !

पर्यावरण बिगाड़ धरा का, अंतरिक्ष में जाओगे?
तो उसके परिणाम भयंकर, सकल विश्व में पाओगे।

काट-काट कर वृक्ष निरंतर
नंगे पर्वत कर डाले।
हरी-भरी धरती के मुख पर
शेष रहे धब्बे काले।
वन को रेगिस्तान बनाकर, मेघ-मल्हार न गाओगे।
पर्यावरण बिगाड़ धरा का अंतरिक्ष में जाओगे?

ओ विज्ञानी! सिखा रहे क्यों
चमत्कार की भाषाएँ!
दासी बना प्रकृति को रखते
क्यों विकास की आशाएँ?
यदि सागर को क्षुब्ध किया, तो बाढ़-सुनामी पाओगे!
पर्यावरण बिगाड़ विश्व का, अन्तरिक्ष में जाओगे?

अणु की शक्ति प्रकृति से लेकर
मत उसका ही नाश करो।
ईंधन का कचरा फैलाकर
मत श्वासों में त्रास भरो।
बढ़ा छेद 'ओजोन' परत का जीवन-ज्योति बुझाओगे!
पर्यावरण बिगाड़ विश्व का अंतरिक्ष में जाओगे?

कीर्तिवर्द्धन

मौन रहकर भी

मौन रहकर भी मुखर जो हो रहा है,
दर्द चेहरे से बयां वो हो रहा है।
सोचा था जीऊँ तन्हां खुशहाल होकर
तन्हां जीवन आज बोझिल हो रहा है।
उम्र गुजरी, सोचा नहीं मैंने कभी कुछ,
जो नहीं सोचा, वही सब हो रहा है।
साथ थे मेरे हजारों हमसफर,
आज क्यों सूना सा जीवन हो रहा है।
मधुमास के दिन और रातें अब कहाँ,
पतझड़ सा यौवन, उजड़ा सा आंगन हो रहा है।
आँसू नहीं बहते मेरी आँख से अब
आँसुओं का अहसास क्यूँ कर हो रहा है।

रघुवीर सहाय

निमंत्रण

कुछ निमंत्रण जिनमें पहुँचा नहीं
उनके चिकने कागज के पीछे मैं लिखूँगा
कि अब मैं चाहता हूँ।
दूर उस घर में कितनी भली
हँसी वह खुशी की है
हँसो और खुश रहो
मुझे पड़ा रहने दो यहीं दूर
जीना चाहता नहीं
क्या यह कह रहा हूँ कि जीना नहीं चाहता?
ठहरो यह अनिश्चित था
क्यों मैंने कह डाला
जब तक कि तय न हो क्या चाहता हूँ मैं
कोई पढ़े नहीं
और पढ़े तो उधर छपा निमंत्रण ही पढ़े
जहाँ मैं गया नहीं।

योगेश्वर दूबे

अकेले मुस्कुराया नहीं करते!

अपनों से दूर, यों जाया नहीं करते,
गैरों से रिश्ते बनाया नहीं करते।
यादों में अपनी, संजोकर के हमको,
अकेले अकेले, मुस्कुराया नहीं करते।
बहुत ही खुसूसी, वो बातें हमारी,
औरों को यों ही, बताया नहीं करते।
ओ बचपन के साथी, जवानी में आकर,
अपनों से चेहरा, छुपाया नहीं करते।
बचपन की यादें, सताएँगी तुमको,
अकेले में शबनम, बहाया नहीं करते।
अश्कों को हमसे, छुपाकर के हरदम,
चिल्मन को यों ही, भिगाया नहीं करते।
कहीं दूर जाकर, आशियाना बनाकर,
फिर ख्वाबों में आकर, सताया नहीं करते।
वक्त के सफर में, मिटे गम भी होंगे,
अपनों की यादें, मिटाया नहीं करते।
गैरों की बगिया में, दफन पाके हमको,
यों आँखों से आँसू, बहाया नहीं करते।

रघुनन्दन प्रसाद

तुम सुन्दर हो

तुम सुन्दर हो, सच में सुन्दर हो
यह भ्रम है तुम्हारे मन में,
तुम कितनी सुन्दर हो
यह प्रगट है तुम्हारी वाणी में,
तुम्हारी सौम्या मधुरता में।
पर यह देह नहीं उसकी प्रतीक
वह तो वस्तु है जगत की,
मत भ्रम पालो अपने में
यह देह बनी है मिट्टी की,
मिट मिट कर बनती है।
गरब न करना तुम्हारी अपनी है,
इसमें जो रहता है उसको
आँख बंद कर पहचानो,
सुन्दर तो केवल वह है
कहता हूँ तुम उसको जानो।

भावना व्यास

आज फिर अकेली हूँ

तुम सामने थे तब कम अकेली थी
पर थोड़ी तो तब भी थी ही।
जब कभी मन ऐसे अकेला हो जाता है,
तो सोचता हूँ कोई तो उपाय होगा।
कोई तो रास्ता होगा,
तुम्हारे पास मेरे मन तक पहुँचने की,
कोई तो भाषा होगी जो बिना शब्दों के भी
भावनाओं तक एक दिलासा भेज पायेंगी।
कोई तो भरोसा होगा जिसके सहारे
तुम मेरे सारे कटु शब्दों को अनसुना करके
उनके पीछे अगोचर सुगन्धित प्रेम को देख लोगे,
आसुँओं को अकेले बह जाने देने के बजाय
अपनी मुस्कराहट के पीछे ढकेल दोगे।
कोई तो बन्धन ऐसा होगा हमारे बीच,
आत्माओं के विश्वास और आपसी समझ से,
ऐसा सेतु निर्माण करेगा जो इस नश्वर शरीर की
अतृप्त अनुभूति का कभी बोध न होने देगा।

एक झोंका सुगंध का

❒ सुषमा सिंह

आज समीर को अस्पताल में आए हुए पन्द्रह दिन हो गए। सुरभि के प्राण नखों में समाए रहे। न खाना, न पीना और हाँ सोना भी कहाँ हो पाया। उस दिन जब नहाते-नहाते अचानक समीर का शरीर ऐंठने लगा, तो वह घबरा गयी, बदहवास हो गई। कुछ समझ ही न पाई कि क्या करे, फिर एकदम चैतन्य हुई और झटपट भैया को फोन किया कि अस्पताल ले जा रही हूँ। पड़ोस के चावला साहब की गाड़ी निकलवाई और समीर को अस्पताल लेकर पहुँची। दूसरे दिन नेहा का दसवीं कक्षा का पहला पेपर था। वह देर तक पढ़ती रही, इसलिए उस समय तक सो रही थी। उसे जगाकर घर का ध्यान रखने की सुधि तक नहीं रही उसे। एक डॉक्टर समीर को सम्हालने लगा और वह कुछ होश में आई तो उसे नेहा और नन्हें निहाल की याद आई। हाँ, वह भी तो सो रहा था। उसे दो-तीन दिन से हल्का बुखार था। दवा देने पर उतर जाता, फिर चढ़ आता। नहाते समय समीर उसे किसी बाल रोग विशेषज्ञ को दिखाने की बात कर ही रहा था। वह तो पास खड़ी थी, वरना अगर कहीं वह गुसलखाना बन्द करके नहा रहा होता तो...। हे भगवान वह इस विचार से घबरा गई। वही बुरा वक्त लाता है, तो वही सद्बुद्धि भी देता है। जल्दी ही समीर को डॉक्टरी मदद मिल गई। अब वह संभलने की स्थिति में है, धीरे-धीरे ठीक हो जाएगा।

आज वह रह-रहकर लता के बारे में सोचने लगती है। अभी ही तो समीर को देखकर तबियत पूछकर गई है। ऑफिस के साथियों को तो चावला साहब ने तभी खबर कर दी थी, सब आकर मिल गए थे। एक रात में सारी रौनक जाने कहाँ चली गई थी। इतनी कमजोरी उतर आई थी चेहरे पर कि समीर की ओर देखने में कष्ट होता था। उनकी आँखें भर आईं, कहने लगी, 'मैं यहीं पास ही रहती हूँ। किसी भी समय, कैसी भी जरूरत हो, मुझे अपने साथ समझियेगा। तभी माँ आ गई थीं और उन्होंने कहा था, 'मैं यहाँ हूँ बेटी, तू घर जा, निहाल की तबियत देख और नेहा बिटिया को भी समझाना कि चिन्ता न करे, पापा अच्छे हो जाएँगे। उसे पढ़ने के लिए कहना और जब तक समीर थोड़ा संभल न जाए, उसे उनसे मिलाना मत।' उसका अगला पेपर इंग्लिश का था और मेरी मनःस्थिति उसे कुछ भी बताने की नहीं थी। मैंने माँ से कहा, 'क्या करूँ माँ, उसने तो सारे एक्सप्लेनेशन्स मेरे भरोसे छोड़ रखे हैं। मैं तो अब कुछ पढ़ा नहीं पाऊँगी।' तब लता ने कहा था, 'आप चिन्ता न करें, मैं उसे पढ़ा दूँगी। यहाँ तो माँ जी हैं ही, चलिए हम लोग बच्चों को संभाल लेते हैं' और लता सुरभि के साथ घर आ गई थी। वह जब तक नहाई और चाय बनाकर लाई, तब तक लता बच्चों के पास रही। निहाल को भी उलझाये रही और नेहा को भी पढ़ाती रही। फिर निहाल को सुरभि ने ले लिया और नेहा लता से पढ़ती रही। दो-ढ़ाई घंटे बाद लता चली तो सुरभि फिर उसके साथ चल दी अस्पताल के लिए। लता ने परामर्श दिया, 'देखिए, मैं, आप और माँ जी बारी-बारी से समीर की देखभाल कर लेंगे तो सब काम सुचारू रूप से हो जाएगा। आप मेरे सुझाव को अन्यथा न लें' और तब से निरन्तर वह समय से आ जाती। रात को भी एक बार अपने पति के साथ आकर समीर की खबर ले लेती।

कई बार उनकी भंगिमाओं में, स्वर में, उनके बैठे-बैठे कहीं खो जाने के ढंग में सुरभि को कुछ अजीब सी बात लगी; किन्तु वह स्वयं समीर को लेकर इतना सोचती रहती थी कि और कुछ सोचने का उसे अवकाश ही नहीं था। पर आज जब डॉ. साहब समीर के प्रति बड़े आश्वस्त लगे और उसे भी आराम में पाया सुरभि ने तो पहला विचार यह जगा उसके मानस में कि लता जी ने इतना सब कुछ हमारे लिए क्यों किया?

एक बार बाजार में मिली थीं और तब बस यही बताया था, समीर ने कि आप भी मेरे साथ ऑफिस में हैं और उसने औपचारिकता निभाई थी कि कभी घर आइए न। उन्होंने कहा तो था हँसकर कि आपसे मिलकर बड़ा अच्छा लगा है और आपके बच्चे भी बड़े प्यारे हैं। आप लोग से मिलने तो आना ही पड़ेगा।' किन्तु कभी आई नहीं और न कभी समीर ने

ऑफिस से लौटते समय और रात में पति के साथ लता का आना जारी रहा। दोपहर की लता और रात की लता में सुरभि को कुछ अन्तर लगा। उसने स्वयं को समझाया, यह मेरे मन को क्या हो रहा है? एक भली महिला को मैं संशय की दृष्टि से क्यों देख रही हूँ? पर मन नहीं मानता था। समीर सो रहे थे। सुरभि ने चाय बनाई और लता को लेकर ड्राइंग रूप में आ बैठी। वे बातें करती रहीं। लता ने एकाएक पूछा, 'कुछ अनमनी सी लग रही हो सुरभि, क्या बात है, मुझे नहीं बताओगी?' सुरभि पहले तो लता की ओर एकटक देखती रही, फिर नजर झुकाकर बोली, 'दीदी, न जाने क्यों लगता है कि आप दोनों केवल सहकर्मी नहीं हैं।'

ही उनका कोई जिक्र किया। पर अब सोच रही थी कि यह फिक्र, यह सहयोग, यह अपनापन? यह उनका स्वभाव है या कुछ और बात है? कहीं समीर के प्रति कोई अतिरिक्त लगाव? यह उनका स्वभाव है या कुछ और बात है? कहीं समीर के प्रति कोई अतिरिक्त लगाव? और वह सिहर गई। खून के दौरे में भीतर तक उसके एक ठण्डी लकीर सी खिंच गई- 'अरे मैं तो रोज ही शाम को लता को समीर के पास छोड़ती रही हूँ। सुबह माँ और दोपहर को स्वयं सुरभि। रात में भैया आ जाते हैं। उसके दिमाग में उठा पटक होने लगी। वह बैचेन हो उठी, उसकी भूख प्यास जाती रही, उसकी रात की नींद उड़ गयी। उसने तय किया कि वह लता से मना कर देगी; किंतु इसकी आवश्यकता नहीं पड़ी; क्योंकि डॉक्टर साहब ने समीर को घर ले जाने की अनुमति दे दी।

ऑफिस से लौटते समय और रात में पति के साथ लता का आना जारी रहा। दोपहर की लता और रात की लता में सुरभि को कुछ अन्तर लगा। उसने स्वयं को समझाया, यह मेरे मन को क्या हो रहा है? एक भली महिला को मैं संशय की दृष्टि से क्यों देख रही हूँ? पर मन नहीं मानता था। समीर सो रहे थे। सुरभि ने चाय बनाई और लता को लेकर ड्राइंग रूप में आ बैठी। वे बातें करती रहीं। लता ने एकाएक पूछा, 'कुछ अनमनी सी लग रही हो सुरभि, क्या बात है, मुझे नहीं बताओगी?' सुरभि पहले तो लता की ओर एकटक देखती रही, फिर नजर झुकाकर बोली, 'दीदी, न जाने क्यों लगता है कि आप दोनों केवल सहकर्मी नहीं हैं। कहीं कोई सहकर्मी महिला अपने पुरुष सहकर्मी के लिए इतना कुछ करती है। इतना तो पुरुष मित्र भी नहीं कर पाते जितना आपने किया तन से मन से धन से। मैं आपकी बहुत बहुत आभारी हूँ दीदी, पर मेरा मन मुझे खाए जा रहा है। मैं क्या करूँ, आप ही बताइए। मेरा यह प्रश्न बेकार है न, बेबकूफी है न? पर... लता कुछ देर चुप रही, फिर वह उठ खड़ी हुई और जैसे अपने शब्दों को तोलते हुए कहने लगी। 'तुम्हारा प्रश्न न बेकार है, न बेवकूफी सुरभि, बल्कि बड़ा स्वाभाविक प्रश्न है। लेकिन तुम किसी भी मिलने वाले से, नर्स से, डॉक्टर से पूछ सकती हो कि कभी किसी क्षण मैंने कोई ऐसी हरकत की हो जिससे मेरे या समीर के बारे में कुछ अन्यथा सोचा जा सके। फिर भी आज मैं तुम्हारे यह स्वीकार करती हूँ। सुरभि, मैं समीर की सहकर्मी और मित्र तो हूँ ही, वह मुझे अच्छा भी लगता है, मैं उसे प्यार करती हूँ तहे दिल से। ऐसा नहीं कि मैं अपने पति को प्यार नहीं करती या मैं बेवफा हूँ, लेकिन जैसे बहन दो भाइयों को प्यार करती है, माँ अपनी संतानों से प्यार करती है, मैं भी अपने पति के साथ-साथ समीर से प्यार करती हूँ। उसके लिए जाने क्या-क्या महसूस करती हूँ और सच कहती हूँ कि चाहकर भी मैं अपनी भावनाओं को उससे छिपा नहीं सकी। मैं अपनी समझ में ऑफिस वालों के सामने अपनी भावनाओं पर अंकुश रखती रही हूँ, फिर भी समीर ने मुझे बताया है कि उसके दोस्त उसे मेरे नाम से जब तब छेड़ देते हैं, लेकिन उसने मुझे लेकर कभी कोई डींग नहीं मारी। न कभी कहीं बाहर घूमने या साथ खाने-पीने का प्रस्ताव रखा। अब कह ही रही हूँ तो बता दूँ कि मैं तो चाहती भी रही, घर आने के लिए भी समीर से कई बार कहा। पर वह आने की कहकर भी कभी नहीं आया। मैंने कभी कहा भी कि कहीं और बैठकर बातें करें तो उसने 'देखते हैं' कहकर बात आई गई कर दी। वह मेरी कशिश को समझता रहा, लेकिन कभी न उसने मुझे टाला, न प्रोत्साहित किया। एक बार मेरी हताशा के क्षण में उसने मुझसे कहा, ''हर बात का एक समय होता है, एक उम्र होती है। हमारी भावना हमारा बल बने, हमारे व्यक्तित्व को निखारे, हमें वह करना है। मुझे अपनी से ज्यादा तुम्हारी प्रतिष्ठा प्यारी है' और सचमुच उस दिन से मेरे अन्दर की आग एक ठण्डा सोता बन गई। मेरे व्यक्तित्व में एक ठहराव आ गया। मुझे एक शांति मिल गई और आज यह सब जानकर मैं नहीं जानती, तुम मेरे बारे में क्या सोचेगी। लेकिन मुझे विश्वास है कि समीर मेरी नजरों में जितने ऊँचे हैं, तुम उन्हें उससे भी ऊँचा आसन दोगी। अपनी बातों में हमेशा तुम्हारे लिए प्यार और विश्वास का इजहार किया है। समीर ने मेरे पति देव को भी पूरा आदर और मान दिया है। बस यही मेरा और समीर का संबंध है। तुमने मुझे अपनी दीदी कहा है सुरभि और सदा मैं तुम्हारी दीदी ही रहना चाहूँगी। लता जी चुप होकर सोफे पर बैठ गईं। समीर आज पहली बार स्वयं चलकर ड्राइंग रूप में आया था, दोनों की नजरें एक साथ उस पर पड़ीं, लता तो हल्के से मुस्करा दी, पर सुरभि दौड़कर समीर की छाती से जा लगी। समीर कुछ बोल तो नहीं सके पर उन्होंने सुरभि को अपनी बाहों में कस लिया और लता की ओर देखकर मुस्कराने का प्रयत्न किया। मलय समीर लता को एक हल्का झोंका दे सकता है पर सुरभि का तो आलिंगन ही करेगा न, सुरभि ने सोचा और वह समीर को थामे-थामे उसके बिस्तर की ओर बढ़ गई। समीर को अभी आराम की जरूरत है, लता ने सोचा। तभी दौड़कर नेहा लता के पास आई। 'आण्टी मेरे सब पेपर हो गए, अब आप हमें पीजा खिलाने ले चलेंगी न।' 'हाँ, हाँ क्यों नहीं'- उसने कहा, 'कल तैयार रहना, मैं तुम्हें जरूर ले चलूँगी।'

पहला दिन

❑ रघुनन्दन प्रसाद तिवारी

आठ मंजिली इमारत के सिक्योरिटी गेट से बाहर चार-पाँच युवतियाँ खड़ी बात कर रही थीं कि एक आगन्तुक ने उनसे पूछ लिया, क्या आप इसी बहुमंजिली इमारत में रहते हैं? वे सभी आश्चर्य से उसको देखने लगीं। उनमें एक शर्ट और टी-शर्ट धारी ने जवाब दिया, हाँ रहते हैं पर हमारे पास आपसे बात करने का समय नहीं है। जवाब देने के साथ ही थोड़ा और हट कर अपनी चर्चा में मशगूल हो गई। अन्दर से आती हुई एक अन्य युवा महिला खड़ी हो गई और उसने पूछा, क्या प्रॉब्लेम है भाई। आगन्तुक ने उसको देखा, वह काले बूट के ऊपर काली-नीली सी जीन और उसके उपर हॉफ व्हाईट शर्ट पहने थी। बाल न बहुत लंबे थे और न ही बहुत छोटे। आँखों पर हल्का बादामी चश्मा। इसमें से उसकी आँखों की झलक साफ दिखाई दे रही थी। चेहरे पर सौम्यता के साथ गंभीरता और हल्का आकर्षण था। उसकी पीठ पर स्कूली बच्चों की तरह का स्कूल बैग था जिसमें शायद लेपटाप होगा। उसकी आकृति और आवाज को देख सुन कर बोला, मैं उड़ीसा से आया हूँ और इस काम्प्लेक्स में बहुत से फ्लैट हैं। क्या उनमें कोई पेइंग गेस्ट रखना चाहता है। मैं छह माह के लिए आवास की सुविधा चाहता हूँ। मेरा नाम अश्विन पांडा है। मैं कोलकाता विश्वविद्यालय से गोवा की वनस्पतियों पर शोध करने आया हूँ। अश्विन की बात सुन कर कहा, मैं लीला देशपाण्डे हूँ। यहाँ मोबाइल कंपनी में एक्जीक्यूटिव हूँ। मेरा नागपुर से यहाँ ट्रांसफर हुआ है। मैं आपकी आवास की समस्या हल कर सकती हूँ। मैंने दो बेड रूम का फ्लैट पन्द्रह हजार में किराये पर लिया है। यदि आप अपनी पहचान और कथन की विश्वसनीयता करा सकते हैं तो छह हजार की भागीदारी में एक कमरे में रह सकते हैं; परंतु किचन में कोई भागीदारी नहीं होगी। इस समय मैं ऑफिस जा रही हूँ। आप या तो शाम छह बजे यहीं 315 नं. फ्लैट में मिलिए या फिर आप मेरे साथ ऑफिस ही चलिए। वहीं सारी बातें हो जाएँगी। लंच में आपको यहाँ मैं छोड़ दूँगी।

अश्विन की बात बन गई। लीला लंच से पहले ही अश्विन को एक कमरे में रहने-सहने का तौर तरीका बता कर, एक चाबी देकर चली गई। अश्विन को यह उम्मीद नहीं थी कि उसकी आवास समस्या इतनी सरलता और सहजता के साथ हल हो जाएगी। अश्विन, लीला के जाने के बाद कमरे में पहुँच पीठ का बोझ उतार कर टेबल पर रखा और कमरे का मुआयना करने लगा। दस बाई बारह का कमरा था। कमरे की खिड़की पश्चिम की ओर खुलती थी। खिड़की चार वाई छ साइज की थी। जिसमें पश्चिम से पूर्व की ओर सिंगल बेड लगा हुआ था तथा बेड के पायताने से ही लगा हुआ अटैच्ड बाथ रूम था। उसके दूसरी ओर खिड़की की तरफ एक मध्यम आकार की टेबल थी जिसके साथ ही घूमने वाली कुर्सी थी जिस पर अश्विन बैठा हुआ था। इसके पूर्व में दीवाल के सहारे एक अलमारी रखी हुई थी। अश्विन ने उसे खोल कर देखा। वह बिल्कुल खाली थी, अलबत्ता उसमें कुछ हैंगर लटक रहे थे। यह सब जायजा लेने के साथ ही सोचने लगा कि निश्चित रूप से किराये पर देने के विचार से ही इसकी साज-सज्जा की गई है। यह भी ध्यान रखा गया है कि इसमें भागीदार भी आराम से रह सकें।

अश्विन ने अपना बैग खोला और उसमें रखी कुछ किताबें, कुछ फाईलें, कुछ खुले नोट्स टेबल पर लगा दिए। बैग में से रोज की जरूरत की पहनने की सामग्री अलमारी और बाथ रूम में पहुँचा दी। इन सब के बाद आराम से स्नान कर पूर्णतः फ्रेश हुआ और एक डायरी उठा, दरवाजा लॉक कर, लिफ्ट से नीचे उतर कर, अर्पाटमेंट से बाहर आया और शहर की ओर चल दिया। इस समय शाम के चार बज रहे थे। कुछ दूर चलने के बाद दाहिनी ओर एक रेस्तरा दिखाई दिया और उसमें पहुँच पेट में कुछ ईंधन की सप्लाई की, फिर रेस्तरा के दूसरी ओर बाहर निकल कर देखा, समुद्र की लहरों पर सूर्य की तिरछी किरणें, एक अनोखा ही दृश्य बना रही हैं। पुरी के समुद्र तट पर तो ऊगते सूरज की किरणें उठती हुई लहरों पर गिरती हैं और वे प्रखर होती जाती हैं। कुछ ही घंटे में नजारा खत्म हो जाता है। फिर तो तट पर फेरी वालों का जमावड़ा रहता जो तीर्थ यात्रा पर आये हुए भक्तों को अपना सामान बेचने की जुगत में लगे रहते हैं। कोई कंठी बेच रहा है तो कोई शंख बेच रहा है तो कोई तरह-तरह की मालाएँ बेचने की फिराक में लगा हुआ है। भक्तों के रेले में किसी एक में ऊपर झुकी कमर वाले मर्द, जिनकी आँखों पर बहुधा चश्मा चढ़ा हुआ रहता और ऐसी ही पाँच छः महिलाएँ, एक दो बालक रहते हैं। चाहे सुबह आओ, या दोपहर में आओ या फिर शाम को, माजरा यही रहता है। अश्विन धीरे-धीरे किनारे की ओर समुद्र तट पर बने आश्रय स्थलों को देखता हुआ चल रहा था। छायादार पेड़ थे। उनके नीचे बैठने के लिए बेंचे थीं। इन बेंचों की रखावट कुछ ऐसी थी कि जिन पर बैठ कर समुद्र की उठती गिरती लहरों का आनंद लिया जा सके तथा कुछ ऐसी भी रखी गईं थी कि जिन पर बैठ कर समुद्र तट पर घूमने वालों को, उनकी क्रीड़ाओं को भी देख सकें। इसे यह देख कर आश्चर्य हुआ कि जैसे-जैसे संध्या उतर रही थी वैसे ही वैसे युवा पीढ़ी समुद्री किनारे सिमटती आ रही थी। समुद्र की ओर से लहरे किनारे को छूने के लिए भाग रही थीं और किनारे की ओर से युवा पीढ़ियाँ आती हुई लहरों को छूने के लिए भाग रही थीं। युवा हो या युवती, प्रायः अधिकांश के पैर पानी में भींगने और डूबने के लिए खुले हुए थे। अपने को भिंगो कर, पैरों को लहरों में लहरा कर सभी मौज-मस्ती मना रहे थे। युवतियाँ शर्ट और टी शर्ट में थीं और

युवा भी बरमूडा और हल्की पतली कन्धों वाली बनियान में इधर से उधर और उधर से इधर परस्पर कन्धों पर हाथ डाले या फिर हाथों में हाथ लिए बेफिक्री से चहलकदमी कर रहे थे। कुछ जोड़ों के साथ साल-छः महीने के बच्चे भी उनकी गोद में थे। उम्रदराज कम ही नजर आए। नजर आए भी तो किसी न किसी बेंच पर स्थायी रूप से बिराजे हुए, लेकिन उनकी नजरें यहाँ के नजारों को देखने में जुटी हुई थीं।

गोवा आने के पहले गोवा के विषय में जो जानकारी अपने मन में एकत्र थी, उसमें यहाँ के रहने वालों में ईसाई, हिन्दू और मुसलमान बराबर-बराबर हैं, ऐसा सुना था और पढ़ा भी था। पर इस समुद्री तट पर मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था कि यहाँ गोवा में आबादी केवल इंसानों की है। धर्म और जातियों की याद दिलाने वाली विभाजक निशानियाँ एकदम नदारत थीं, हर चेहरे पर हँसी और मुस्कराहट का अपना अटूट, कभी विखण्डित न होने वाला साम्राज्य था। यहाँ न तो कोई किसी को रोक रहा था, न ही टोक रहा था और न ही बुरी नजरों से घूर रहा था। अगर उन्मुक्त जीवन की कोई कल्पना कर सकता था तो वह यहाँ विद्यमान थी। कोई क्या पहने है? कोई कैसा चल रहा है? कोई कैसा बैठा है? किसी को भी न तो देखने की लालसा थी और न ही किसी को कुछ सोचने की फुरसत थी। सभी अपने अपने ढंग से समुद्र तट का आनंद ले रहे थे। अस्ताचलगामी सूर्य की किरणें तिरछी होते-होते 170 डिग्री से 180 को छू रही थीं और जाते हुए समुद्र की सतह पर निखालिश स्वर्ण की चादर बिछाती जा रही थीं और ये मेरी आँखें थीं जो उस स्वर्णिम आभा से शनैः शनैः सिक्त हो रही थीं। यह अद्भुत बला का प्रकृतिक-सौन्दर्य, आज पहली बार अश्विन अभिभूत होकर देख रहा था। यहाँ सूर्य स्वयं अपने स्वर्णिम स्वरूप को पणजी गोवा तट पर फैली अनन्त जल राशि के दर्पण में देख कर मुग्ध हो जाता है और एक ही झटके में जल समाधि ले लेता है, पर जाने के पहले तट वालों को आश्वस्त करता है और स्वयं भी आश्वस्त होता है कि कल फिर आना, मैं भी आऊँगा।

प्रकाश अपने अस्तित्व को खोता जा रहा था। उसी तरह तट पर एकत्र हुआ जन समूह भी बिखर रहा था। बेंचों पर बैठे हुए उम्रदराज खड़े होकर अपने हाथ पैर सीधा करने लगे। धीरे-धीरे चल कर बढ़ते हुए अंधकार में विलुप्त हो गए। जिनके साथ छोटे बालक थे, वे भी अपना-अपना रास्ता नापने में लग गए। युवा वर्ग अंधेरे के आगोश में एक दूसरे से अधिक से अधिक निकट होने लगे। कुछ युवा इससे भी

आगे जाने लगे, तब अश्विन सड़क की ओर मुँह कर आगे बढ़ने लगा। उसने घड़ी की ओर देखा, काँटा नौ के करीब पहुँच रहा था। छोटी झाड़ियों, झुरमुटों से निकल सड़क पकड़ ली। सड़क पर कुछ आगे एक साइकिल ठेला खड़ा था, जिस पर गन्ने का रस निकाल कर बेचा जा रहा था। अश्विन ने महसूस किया कि उसका गला सूख रहा है, यहाँ गन्ने का ताजा रस पी लेना चाहिए। ठेले वाले से बोला- एक गिलास रस बना दो। ठेले वाले ने पलट कर पूछा, गन्ने का या काजू का? अश्विन को सोच में देख ठेले वाला बोला, बाबू जी आप बाहर के हैं, यहाँ तो काजू की कच्ची शराब भी मिलती है, इसलिए आपसे पूछा। गन्ने का रस पीकर अश्विन अपार्टमेंट की ओर चल पड़ा। उसके मन में एक ही विचार आ रहा था कि यहाँ की जीवन शैली उड़ीसा और कोलकाता से भिन्न है। उड़ीसा के कस्बों और शहरों में मौज-मस्ती के तरीके सामाजिक होते हैं। उसमें छोटे-बड़े सभी सम्मिलित होते हैं। उड़ीसा के तटों पर ताड़ी आदि की बिक्री होती है। अधिकतर मछुआरे होते हैं। पुरी में वहाँ के निवासियों के अलावा श्री जी के दर्शनार्थियों का आवागमन लगा रहता है। समुद्र तट पर सूर्य देवता को अर्ध्य देने के लिए, आने वाले ही अधिक होते हैं। वहाँ वे जीवन में मुक्ति का रास्ता खोजते हैं; किंतु यहाँ जीवन में मौज-मस्ती उल्लास की ही चाहत देखने को मिली। कोलकाता में सभी आगे को भागते नजर आए, कोई भी पीछे मुड़कर नहीं देखता और न ही कोई एक जगह ठहरा हुआ मिलता है। उसके विचार भी स्थिर होते। आज वह आपका मित्र है। आपसे घनिष्ठता का दावा करता है। पर हो सकता है, अगले ही दिन वह आपको पहचानने से इंकार कर दे। पर लीला देशपाण्डे की भद्रता को क्या कहें? मेरे पास तो उस लायक शब्द ही नहीं है। कोलकाता में इसी स्वभाव की मिलती-जुलती स्मिता थी। जब एक बार बीमारी ने मुझे घेरा तो स्मिता अपनी माँ के साथ आई और मुझे होस्टल से अपने घर ले गई। उसकी माँ ने डॉक्टर बुला कर मेरा इलाज कराया। जब मैं स्वस्थ हो गया, तब मुझे होस्टल जाने दिया। इसी तरह अश्विन सोचता हुआ अपार्टमेंट जा रहा था। एक रेस्तरां में बैठ कर एक डोसा खाया, पानी की एक बोतल ली और फिर अपने कमरे पर पहुँच कॉल बेल दबा दी।

लीला देशपाण्डे में स्मिता को देखता हुआ सोचने लगा कि यह शहर पराया सा नहीं लगेगा। यहाँ लगन के साथ वनस्पतियों पर समय के भीतर काम कर सकूँगा। हालाँकि यहाँ की वनस्पतियों में विविधता बहुत है पर उसमें भी मुझे केवल एक ही वर्ग की वनस्पितियों का अध्ययन करना है। सोच ही रहा था कि लीला ने दरवाजा खोला और स्वागत की मुद्रा में पूछा, कैसी रही आज आपकी शहर की यात्रा? अश्विन ने हँसते हुए जवाब दिया, जिस दिन की शुरुआत आप जैसी मंगलाकांक्षी व्यक्ति से हो, वह निश्चित रूप से परम संतोषप्रद एवं फलदायक होगी। मैं प्रातः से ही अपने को भाग्यशाली मान रहा हूँ जिसे कि आप जैसे सहज व्यक्तित्व वाले का आशीर्वाद प्राप्त हुआ है। मैं सोचता हूँ जैसा कि आज पहला दिन ईश्वर ने आपके द्वारा प्रदान किया है, उसी तरह लक्ष्य प्राप्ति तक हर दिन रहेगा। मेरा हार्दिक आभार और शुभ रात्रि स्वीकार करें।

राजेश खन्ना

कल क्या हो किसने जाना?

❒ शाहिद रहीम

भारतीय सिनेमा जगत 'बॉलीवुड' के पहले सुपर स्टार राजेश खन्ना अब हमारे बीच नहीं रहे। उनकी एक फिल्म 'अंदाज' के एक गाने की पंक्तियाँ उनके निधन की खबर से बरबस याद हो आई- 'जिंदगी एक सफर है, सुहाना, यहाँ कल क्या हो किसने जाना? 18 जुलाई को होनी घट गई। सत्तर-अस्सी के दशक की पीढ़ियाँ शोक में डूब गईं। पूरा फिल्म उद्योग 70 वर्षीय कलाकार को श्रद्धांजली देने उनके घर से श्मशानघाट तक बारिश में भींगता हुआ गया। न्यूज चैनलों ने अपनी समझ के अनुसार उनकी अद्भुत कलाभिव्यक्ति को याद किया।

राजेश का वास्तविक नाम जतिन खन्ना था, फिल्मों के लिए राजेश खन्ना हो गया। घर और मुहल्ले के लोग उन्हें 'काका' (प्यारे बच्चे) बुलाते थे। धीरे-धीरे सहकर्मियों के बीच भी वह 'काका' बुलाए जाने लगे। 1965 ई. में वहीदा रहमान के साथ उन्होंने 'आखरी खत' से डेब्यू किया। यह ब्लैक एण्ड व्हाईट फिल्म थी। लेकिन सबसे पहले रिलीज हुई बबीता के साथ 'राज' जिसमें काका ने कथित रूप से डबल रोल किया था, फिर आशा पारीख के साथ 'बहारों के सपने यूं तो राजेश खन्ना को उनके अपने अलग अंदाज-अदाएँ और पहनावे के साथ गर्दन घुमाकर संवाद अभिव्यक्त करने की और मूर्तभाव से चिंतन व्यक्त करने की कलात्मक अभिव्यक्ति के कारण लोकप्रियता मिली।

ऐसा सभी कहते हैं; परंतु सच्चाई कुछ और है और वह है कि वह अपने दर्शकों को गम के समय भी हँसकर जीवन जीने की प्रेरणा देने के कारण निरंतर लोकप्रियता की ऊँचाइयाँ चढ़ते गए।

यादगार-चरित्र

आश्चर्य है कि भारतीय अभिनेताओं का मूल्यांकन उनकी फिल्मों से होने वाली कमाई के आधार पर तो किया जाता है, लेकिन उनके अभिनय और फिल्मों में जिए गए चरित्र के मनोविज्ञान, उसकी जिजीविषा में समाज को बदलने या किसी प्रेरणा के आधार पर नहीं किया जाता। यद्यपि स्वर्गीय राजकपूर ने फिल्म समीक्षकों को सिनेमा के सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन के लिए 'मेरा नाम जोकर' जैसी फिल्म बनाकर मजबूर भी किया; परंतु फिल्म समीक्षक नंगी जाँघों, छातियों के जीरो और पंजाबी व्यास मापने से आगे नहीं बढ़ सके। जिस प्रकार राजकपूर की आग, आवारा, जिस देश में गंगा बहती है, अनाड़ी, प्रेम रोग, बॉबी आदि फिल्में सामाजिक मनोविज्ञान में परिवर्त्तन का संदेश देती है, उसी प्रकार राजेश खन्ना की फिल्में वैयक्तिक मनोविज्ञान में परिवर्तन की प्रेरणा देती है। आनन्द, थोड़ी-सी बेवफाई, अमरप्रेम, अंदाज, दो रास्ते और अवतार में जिये गए चरित्र आज भी समाज में मौजूद हैं और उन्हें राजेश की फिल्में, दुख में भी पूरी जिजीविषा के साथ हँसते हुए जिंदगी गुजारने की प्रेरणा देती हैं।

'आनंद अपने चिकित्सक मित्र डॉ. भास्कर की एक कविता मृत्यु के पूर्व सुनने के लिए टेप रिकॉर्डर ऑन करवाते हैं। डॉ. भास्कर (अमिताभ बच्चन) की आवाज में कविता गूँजती है- 'मौत तू एक कविता है, मुझ से एक कविता का वादा है, मिलेगी मुझको, डूबती नब्जों में, जब दर्द को नींद आने लगे, जर्द-सा चेहरा लिए चाँद उफक तक पहुँचे, दिन अभी पानी में हो, रात किनारे के करीब, न अंधेरा न उजाला हो, न अभी रात न दिन, जिस्म जब खत्म... हो...' यह मौत को अभिव्यक्त करने की कला बेशक फिल्म निदेशक ऋषिकेश मुखर्जी की थाती है, लेकिन इसे जीवित रखा है राजेश खन्ना ने, यह बोल कर कि- 'जिन्दगी और मौत ऊपर वाले के हाथ है, जहाँपनाह उसे न आप बदल सकते हैं न मैं, हम सब तो रंगमंच की कठपुतलियाँ हैं, जिनकी डोर ऊपर वाले की उंगलियों में बँधी है। कब? कौन? कैसे उठेगा? यह कोई नहीं बता सकता... हा... हा... हा...।'

राजेश खन्ना 18 जुलाई, 2012 ई. को लंबी न ठीक होने वाली बीमारी से उठ गए, सम्पत्ति और उनके परिवार के संदर्भ से हुए विवाद हर धनवान या कलाकार के जीवन-मरण के साथ चले हैं और आगे भी चलते रहेंगे। व्यक्ति राजेश खन्ना हो या कोई आम आदमी, केवल अपने कर्म के आधार पर याद किया जाता है।

राजेश अपने अद्भुत और दर्शकों के मन में घर बना लेने वाली अभिनय क्षमता के लिए याद किए जाते रहेंगे। अपने 25 वर्षीय कार्यकाल- 1965 ई. से 1990 ई. तक अपने चरित्रों से देश की तकरीबन तीन पीढ़ियों को अद्भ्य जिजीविषा के साथ जीवन जीने का हौसला दिया। 1990 ई. में वह राजनीति में आए और फिल्मों से तकरीबन संन्यास ले लिया। उनकी आखिरी फिल्म 'आ अब लौट चलें' दर्शक भूले नहीं होंगे, जिसमें उनकी संवाद पंक्ति है- 'अपना देश, दुख में भी सुख देता है।'

उनकी याद में एक ऐसा रिसर्च इंस्टीट्यूट खोला जाना चाहिए, जहाँ समाज पर फिल्मों के सांस्कृतिक प्रभाव का अध्ययन हो और बॉलीवुड के प्रभावी अभिनेताओं ही नहीं, वरन वहाँ के सभी सहयोगियों के कार्यों का मूल्यांकन हो सके और भारतीय फिल्म जगत बॉलीवुड को एक नयी दिशा देने वाले राजेश खन्ना को सच्ची श्रद्धांजली दी जा सके।

पनपती बाजारवादी संस्कृति

❒ रघुनन्दन प्रसाद तिवारी

भावना को प्रेत ने पकड़ रखा है। कैसी अजीब बात है, भावना को भी प्रेत पकड़ता है। उसका अपना विवेक पकड़ता है। विवेक का काम भावना को संयम में रखना, काबू में रखना। भावना के दो पक्ष हैं। एक वह पक्ष है जिसमें कि व्यक्ति हमेशा सकारात्मक सोच में रहता है। स्थिति कितनी भी टेढ़ी और भयानक क्यों न हो, सकारात्मक सोच वाला, कोई न कोई सुखद रास्ता निकाल देता है। भावना का दूसरा पक्ष जिसमें सोच नकारात्मक रहती है। मन में तरह-तरह का लोभ लालच उभरता है। इस तरह हथकण्डे अपनाने को विवश रहता है और किसी न किसी तरह अपना काम बनाकर हवा हो जाता है। उसे न तो नैतिकता का ही बोध रहता है और न ही सामाजिकता का। यही वह प्रेत है जिसने भावना को न केवल अपने वश में कर रखा है अपितु आज की वैश्विक लहर में अतिप्रिय हो गया है।

हमारी नई युवा पीढ़ी की सोच केवल अपने और अपने तक ही सीमित होती जा रही है। इस युवा पीढ़ी के आसपास क्या घटित हो रहा है उससे यह बेखबर है। यह युवा पीढ़ी पूरी तो नहीं किन्तु उसका कुछ भाग तो कुछ भी मतलब नहीं रखना चाहती है। उसे तो केवल अपनी सुख सुविधाओं की चिन्ता रहती है। यह दृष्टि इस पीढ़ी को वैश्विक सभ्यता दे रही है। इस भावना को हमारा भारत देश कई शताब्दियों पहले नकार चुका है। जिसका उल्लेख भारतीय षटदर्शन में उपलब्ध है। यह दृष्टि भारतीय विचारक चार्वाक ने दी थी कि खाओ पियो मौज करो, चाहे ऋण ही क्यों न लेना पड़े, घी पीयो अर्थात् आज हर बैंक क्रेडित कार्ड दे रहा है, भोग और सुविधाओं की वस्तुओं को खरीदने के लिये धन मुहैया करा रहा है। पैसा किस्तों में चुकाते रहिये। घरों में सभी उपभोग की वस्तुएँ बैंक उपलब्ध करा रहे हैं। अगर ब्याज सहित ऋण समय पर न चुका पाये तो? इसकी चिन्ता किसी को नहीं है। हो भी क्यों? सब सहज प्राप्त है। इस पीढ़ी के पुरखों को उधार को सौ रुपया भी भारी पड़ता था। समय पर न चुकाने पर, रातों की नींद हराम हो जाती थी। आज का वैश्विक संस्कृति के बाजारों से तरह-तरह के लुभाऊ विज्ञापनों में युवा पीढ़ी आकर्षित होती

है और उस के भोग की चाहत विवेक सम्मत भी हो जाती है। यही है बाजारवादी प्रेत और यही है बाजारवादी संस्कृति जिसमें केवल सुख, भोग की भावना है।

केवल वस्तुओं की भोग भावना ही क्या? अब तो जैसा कि पहले एक नाटक देखा था। नाटक का नाम था उधार की बीवी। हास्य नाटक था। खूब आनंद उठाया पर अब तो सच में ऐसा होने लगा है। लिव-इन संबंध क्या है। जब दोनों का मन करे। साथ रहें, एक दूसरे को भोगें; किंतु जब कभी मिर्च-मसाला का संतुलन बिगड़ा तो एक टोकियो की तरफ देख रहा है तो दूसरा लंदन की तरफ। तिरसठ की जगह छत्तीस का आंकड़ा सामने। यहीं तो प्रेम की शाश्वत कल्याणी भावना को भोगवादी प्रेत ने पकड़ लिया है। केवल पकड़ा ही नहीं है बात इससे भी आगे पहुँच चुकी है। पुरुष बाप बनना चाहता है। अपना वंश चलाना चाहता है। किसी नवजात शिशु का, पिता बन प्यार देना चाहता है, उसे गोद में लेकर उससे खेलना चाहता है, बात करना चाहता है; परंतु बीवी अपने वदन को कष्ट नहीं देना चाहती। किसी तरह की शारीरिक फजीहत नहीं चाहती; किंतु पति की तरह उसे भी संतान की चाहत है। क्या किया जाए? आज के बाजारू समय में यह कोई बड़ी समस्या नहीं है। यदि आपके पास पैसा है तो किराये की कोख मिल जाती है। माँ बनने की चाहत रखने वाली धनी महिला नौ माह तक अपने पेट में शिशु को पालने की विवशता से मुक्ति, वह किराये की कोख से पूरी कर लेती है। नौ माह के ममत्व व प्रसव वेदना को भोगवादी भावना का प्रेत लील गया। यह भी उसी तरह है जिसमें संतान के पालने के लिए पहले आया और जब संतान पढ़ने लायक हुई तो उसे पास में या दूर-दराज के किसी होस्टल वाले स्कूल में डाल दिया। महीने दो महीने में जैसी फुरसत मिली अपने लाड़ले की शक्ल देख आए। बस जय हिन्द, हो गई संतान के प्रति जिम्मेदारी पूरी और अब किराये की कोख और भी सुखकर मुक्ति देने लगी। यह तो शुरू हो गया। परम्परावादी भावनाओं को प्रेत ने पकड़ लिया और अजगर की तरह धीरे-धीरे लीलना शुरू कर दिया। यूरोपीय या विदेशी संस्कृति में तो अब इन सारी प्रक्रिया से भी छुटकारा पा लेने का सहज तरीका है बच्चा गोद ले लेना, चल गया है। ये बच्चे मिलते कहाँ हैं? इस बात का खुलासा तो मीडिया रोज ही कर रही है। आंकड़े भी दे रही है कि अकेले दिल्ली से इतने बच्चे उठा लिए जाते हैं। गुमशुदा रिपोर्ट के बाद भी, सौ में से दस का पता चलता है। बाकी कहाँ गए? क्या वे सब बाजारवाद में खप गए। इसे कौन कहेगा? किसमें है इतनी ताकत। भावना को प्रेत ने जकड़ लिया और विवेक बाजारवाद या भोगवादी संस्कृति के हाथ बिक गया। जब विवेक ही बिक गया तो सद्भावना कहाँ बची। सकारात्मक सोच धीरे-धीरे विदा हो रही है और समाज और मनुष्यता के प्रति बढ़ती हुई नकारात्मक सोच अपने डैने फैला रही है।

किसानों को बर्बाद कर रहे हैं नकली कीटनाशक

❒ नरेन्द्र सिंह

नकली और मिलावटी कीटनाशकों की वजह से देश में हर साल करोड़ों रुपये की फसलें तबाह हो जाती हैं। इससे किसानों पर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ता है, किसान ऋण लेकर फसलें उगाते हैं, फसलों को हानिकारक कीटों से बचाने के लिए वे कीटनाशकों का इस्तेमाल करते हैं, लेकिन नकली और मिलावटी कीटनाशक कीटों पर प्रभावी नहीं होते, जिससे कीट और पौधों को लगने वाली बीमारियाँ फसल को नुकसान पहुँचाती हैं। इसकी वजह से उत्पादन कम होता है या कई बार पूरी फसल ही खराब हो जाती है। ऐसे में किसानों के सामने अंधेरा छा जाता है। कई मामले तो ऐसे भी सामने आ चुके हैं जब किसानों ने फसल बर्बाद होने पर आत्महत्या तक कर ली। खेतों में कीटनाशकों के छिड़काव के दौरान किसानों की मौतें होने की खबरें भी आए-दिन सुनने को मिलती रहती हैं।

अफसोस की बात यह है कि नकली कीटनाशक और उर्वरक माफिया के खिलाफ कोई सख्त कार्रवाई नहीं की जाती, जिसकी वजह से नकली और मिलावटी कीटनाशकों तथा उर्वरकों का कारोबार तेजी से बढ़ रहा है। एक अनुमान के मुताबिक, इस कारोबार में हर साल तकरीबन 20 फीसद की बढोतरी हो रही है। देश में कीटनाशकों के इस्तेमाल पर नजर रखने वाली नई दिल्ली की एग्रोकेमिकल्स पॉलिसी ग्रुप (एपीजी) के आंकड़ों के मुताबिक, साल 2009 में 1400 करोड़ो रुपये के नकली कीटनाशकों की बिक्री हुई, जिसकी वजह से सात हजार करोड़ रुपये की फसलें तबाह हो गईं। इससे किसानों की हालत बद से बदतर हो गई। नेशनल एकेडमी ऑफ एग्रिकल्चरल साइंसेज के मुताबिक, देश में हर साल औसतन तीन हजार करोड़ रुपये के नकली कीटनाशक बेचे जाते हैं, जबकि कीटनाशकों का कुल बाजार करीब सात हजार करोड़ रुपये का है। यहाँ हर साल तकरीबन 80 हजार टन कीटनाशक बनाए जाते हैं। इंडियन काउंसिल ऑफ एग्रिकल्चरल रिसर्च (आईसीएआर) की मानें तो देश में इस्तेमाल होने वाले कुल कीटनाशकों में तकरीबन 40 फीसदी हिस्सा नकली है। काबिले-गौर है कि बिहार, झारखंड, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और महाराष्ट्र आदि राज्यों में नकली कीटनाशक बनाने का कारोबार बड़े पैमाने पर होता है। ये कारोबारी नामी गिरामी कंपनियों के लेबल का इस्तेमाल करते हैं। अधिकारियों की मिलीभगत के कारण इन कारोबारियों के खिलाफ कोई सख्त कार्रवाई नहीं हो पाती है। कभी-कभार निरीक्षण के नाम पर कार्रवाई होती भी है तो इसे छोटे कारोबारियों तक ही सीमित रखा जाता है। अनियमितता पाए जाने पर कीटनाशक और उर्वरक विक्रेताओं के लाइसेंस रद्द कर दिए जाते हैं, लेकिन कुछ समय बाद वे फिर से लाइसेंस बनवा लेते हैं या बिना लाइसेंस के अपना कारोबार करते हैं। इस तरह यह धंधा बदस्तूर जारी रहता है।

दरअसल, उर्वरक ऐसे यौगिक हैं, जो पौधों के विकास में सहायक होते हैं। उर्वरक दो प्रकार के होते हैं, जैविक और अजैविक। जैव उर्वरक कार्बन पर आधारित होते हैं, जिनमें पत्तियों और गोबर के यौगिक शामिल होते हैं। अजैविक उर्वरक में अमूमन अजैविक रसायन होते हैं। उर्वरकों में मौजूद कुछ सामान्य पोषक नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटैशियम होते हैं। इनमें कैल्शियम, सल्फर और मैगनेशियम जैसे तत्व भी होते हैं। कुछ खास उर्वरकों में क्लोरीन, मैंगनीज, लौह, जिम, तांबा और मोलिबडीनम आदि शामिल होते हैं। उर्वरक पौध की वृद्धि में मदद करते हैं, जबकि कीटनाशक कीटों से पौधे की रक्षा करते हैं। कीटनाशकों में रासायनिक पदार्थ या वायरस, बैक्टीरिया आदि होते हैं। इसमें फासफैमीडोन, लिंडेन, फ्लोरोपाइरीफोस, हेप्टालक्लोथर और मैलेथियान जैसे रासायनिक पदार्थ होते हैं। बहुत से कीटनाशक इंसानों के लिए खतरनाक होते हैं। सरकार ने कुछ कीटनाशकों पर पाबंदी लगाई है, इसके बावजूद देश में इनकी बिक्री बेरोक-टोक चल रही है।

कीटनाशक विक्रेता राजेश कुमार कहते हैं कि किसानों को असली और नकली कीटनाशकों और उर्वरकों की पहचान नहीं होती। इसलिए वे विक्रेता पर भरोसा करके कीटनाशक खरीद लेते हैं। ऐसा नहीं है कि सभी विक्रेता नकली कीटनाशक बेचते हैं, जिन विक्रेताओं को बाजार में अपनी पहचान कायम रखनी है, वे सीधे कंपनी से माल खरीदते हैं। ऐसे कीटनाशक

विक्रेताओं की भी कमी नहीं है, जो किसी बिचौलिये से माल खरीदते हैं। दरअसल, बिचौलिये ज्यादा मुनाफा कमाने के फेर में विक्रेताओं को असली की जगह नकली कीटनाशक बेचते हैं। नकली कीटनाशकों की पैकिंग बिल्कुल बड़ी कीटनाशक कंपनियों की तरह होती है। लेकिन इनकी कीमत में फर्क होता है, जैसे जो असली कीटनाशक तीन सौ रुपये में मिलता है, वही नकली कीटनाशक बाजार में 150 से 200 रुपये तक में मिल जाता है।

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के कृषि वैज्ञानिकों का कहना है कि किसानों को रसायनों के अत्यधिक इस्तेमाल से बचना चाहिए। इससे मित्र कीट नष्ट हो जाते हैं। किसान ज्यादा उपज पाने के लालच में अंधाधुंध कीटनाशकों और उर्वरकों का इस्तेमाल करते हैं, जिसकी वजह से जहाँ भूमि की उपजाऊ शक्ति खत्म हो रही है, वहीं खाद्यान्न भी जहरीला हो रहा है। हालत यह है कि फल, सब्जियों से लेकर अनाज तक में रसायनों की मात्र पाई जा रही है, जो सेहत के लिए बेहद नुकसानदेह है। नकली और मिलावटी कीटनाशकों तथा उर्वरकों की वजह से कई बार किसानों की मेहनत से उगाई गई फसल भी बर्बाद हो जाती है। विश्वविद्यालय द्वारा समय-समय पर शिविर लगाकर किसानों को कीटनाशकों और उर्वरकों के सही इस्तेमाल की जानकारी दी जाती है।

किसानों का कहना है कि वे जितने रुपये के कीटनाशक फसलों में इस्तेमाल करते हैं, उन्हें उसका तकरीबन पाँच गुना फायदा मिलता है, लेकिन नकली और मिलावटी कीटनाशकों की वजह से उनकी फसल बर्बाद हो जाती है। किसानों का कहना है कि बढ़ती आबादी और घटती जमीन ने भी किसानों को रसायनों के अत्यधिक इस्तेमाल के लिए मजबूर किया है। पीढ़ी दर पीढ़ी जमीन का बँटवारा होने की वजह से किसानों के हिस्से में कम जमीन आ रही है। किसान को अपने परिवार का भरण-पोषण करना है, ऐसे में अगर वह ज्यादा उत्पादन चाहता है, तो इसमें गलत क्या है। साथ ही वह यह भी कहते हैं कि बंजर भूमि की समस्या को देखते हुए किसानों को वैकल्पिक तरीका अपनाना चाहिए, जिससे लागत कम आए और उत्पादन भी अच्छा हो। कैथल जिले के चंदाना गाँव के किसान कुशलपाल सिरोही का मानना है कि जैविक खेती को अपनाकर किसान अच्छी आमदनी हासिल कर सकते हैं। केंद्रीय उर्वरक गुणवत्ता नियंत्रण तथा प्रशिक्षण संस्थान (सीएफक्यूसीटीआई) मुख्य संस्थान है, जो उर्वरक की गुणवत्ता का परीक्षण करता है। हरियाणा के फरीदाबाद जिले में स्थित इस संस्थान की तीन क्षेत्रीय उर्वरक नियंत्रण प्रयोगशालाएँ हैं, जो मुंबई, चेन्नई और कल्याणी में हैं। वैसे इस वक्त देश में तकरीबन 67 उर्वरक गुणवत्ता नियंत्रण प्रयोगशालाएँ हैं। हर साल तकरीबन 1,25,205 नमूनों की जांच की जाती है। अमूमन राज्य में एक या इससे ज्यादा प्रयोगशालाएँ होती हैं। पुंडुचेरी को छोड़कर अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम, मणिपुर, त्रिपुरा, मेघालय, दिल्ली, गोवा और सभी संघ शासित राज्यों में एक भी प्रयोगशाला नहीं है। ये राज्य केंद्रीय सेवाओं का इस्तेमाल करते हैं।

बहरहाल, नकली कीटनाशकों और उर्वरकों के मामले में बड़ी कंपनियों को भी आगे आना चाहिए, ताकि उनके नाम पर चल रहे गोरखधंधे पर रोक लगाई जा सके। किसानों को भी जागरूक होने की जरूरत है, ताकि वे असली और नकली में पहचान कर सकें। इसके अलावा किसानों को वैकल्पिक खेती अपनाने पर भी जोर देना चाहिए, ताकि भूमि की उर्वरता बनाए रखने के साथ ही वे अच्छा उत्पादन हासिल कर पाएँ।

हिन्दी सेवी महेश्वर

❐ डॉ. सुधांशु चतुर्वेदी

महेश्वरदयालु गंगवार निर्भीक, प्रबुद्ध, सिद्धहस्त पत्रकार, जागरूक लेखक, नीर-क्षीर-विवेकी सम्पादक और ओजस्वी वक्ता रहे हैं। सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय', रघुवीर सहाय, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, श्रीकांत वर्मा, मनोहर श्याम जोशी जैसे हिन्दी के रचनाकारों के साथ 'दिनमान' में कंधे से कंधा मिलाकर काम करते हुए उसे साहित्य-जगत् में प्रतिष्ठित कराने और 'सण्डे मेल' में संपादन करने के बाद महेश्वर जी ने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ले ली थी। पत्रकारों के हितों तथा अधिकारों के लिए निरंतर आवाज उठाने और संघर्ष करने वाले महेश्वर जी प्रेस परिषद् के आजीवन सदस्य रहे। दिल्ली यूनियन ऑफ जर्नलिस्ट के कार्यों में सदैव सक्रिय भागीदारी और मार्गदर्शन करते हुए उन्होंने अध्यक्ष पद को भी सुशोभित किया। एक पत्रकार के रूप में उनकी छवि भाषा-प्रेमी तथा सिद्धान्तों से समझौता न करने वाले के रूप में थी। महेश्वर जी पत्रकारों की उस पीढ़ी के प्रतिनिधि थे जिसने सदैव पत्रकारिता के उच्च आदर्शों और मानदंडों के लिए कार्य किया। वे अपने कार्यों तथा निर्भीक विचारों के साथ उन लोगों में जीवित हैं जिन्होंने उनके साथ कार्य किया है। स्पष्ट, बेबाक तथा निःसंकोच अपनी बात कहने में वे माहिर थे। उनकी शिक्षा-दीक्षा तथा संस्कार ही उनके आचार-विचार की दृढ़ता के सम्पोषक रहे हैं।

वस्तुतः सच्ची शिक्षा न तो सत्ता की दासी है, न कानून की किंकरी है, न कला की प्रतिहारी है और न ही अर्थशास्त्र की बाँदी है। वह तो धर्म-कर्म का पुनरुद्धार करती है। मानव के मस्तिष्क, इन्द्रियों तथा हृदय की स्वामिनी है। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो 'शिक्षा-शरीर के मानव-शास्त्र और समाज-शास्त्र दो पैर हैं। कला और हुनर दो हाथ हैं, धर्म हृदय है, विज्ञान मस्तिष्क है, तर्क और परीक्षण दो आँखें हैं, इतिहास कान हैं, उद्योग और उत्साह दो फेफड़े हैं, स्वतंत्रता श्वास-प्रश्वास है, राष्ट्रीयता नस है, योग रीढ़ की हड्डी है, श्रद्धा चेतनता है, धीरज व्रत है। वह जन्मदात्री है। जगन्माता है।' ऐसी शिक्षा में संस्कारित महेश्वर दयालु गंगवार एक निर्भीक स्पष्टवादी पत्रकार थे, सीधी-सादी बात कहते थे और करते थे। वे धन के प्रति नहीं, अपने कर्तव्य के प्रति पूर्णरूपेण सजग थे। अपने पुत्र-पुत्रियों से मित्रवत्, धर्म-पत्नी के साथ आत्मसखीवत व्यवहार करने वाले महेश्वर जी समाज में एक मँजे पत्रकार के रूप में प्रतिष्ठित थे।

महेश्वर दयालु जी मनसा-वाचा-कर्मणा एक थे। अर्थात् वे वाणी से जो बोलते थे, वही लेखनी से लिखते थे। उनका जन्म मीरानपुर कटरा से खुदागंज, बीसलपुर होते हुए पीलीभीत जानेवाली सड़क के किनारे स्थित कमलापुर गाँव में 1 जुलाई, 1939 को हुआ था। पारिवारिक पृष्ठभूमि में न तो कोई ऐसा व्यक्ति था और न ही साधन-संपन्नता जो उन्हें भविष्य में कुछ बनने के लिए प्रेरित करती। माताजी का देहांत बचपन में हो जाने के कारण पिताजी द्वारा प्रदत्त संस्कार तथा अपने अन्दर कुछ अलग कर गुजरने की चाह उनमें बचपन से ही थी। अपनी शिक्षा के लिए स्वयं धन अर्जित करना उन्होंने बाल्यकाल से आरंभ कर दिया था। बरेली कॉलेज के आवेदन-पत्र में उन्होंने 'स्वयंजीवी विद्यार्थी' (सेल्फ सपोर्टिंग स्टूडेण्ट) लिखा था।

बरेली कॉलेज में पढ़ते समय अपने अध्यापकों के सहयोगी के रूप में उनकी हिन्दी पुस्तकों की अशुद्धियों को सुधारने तथा अंग्रेजी संदर्भों को हिन्दी में लिखने का कार्य महेश्वर जी किया करते थे। विद्यार्थी जीवन में आशु-भाषण तथा वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में न केवल अपने कॉलेज में अपितु अन्य कॉलेजों में वे बरेली कॉलेज का प्रतिनिधित्व करते थे। छात्र-राजनीति में वे सक्रिय भाग लेते थे।

एम. ए. (हिन्दी) करने के बाद, एम. ए. (संस्कृत) के प्रथम वर्ष में पढ़ते समय उनका नवभारत टाइम्स के विज्ञापन विभाग में अनुवादक के रूप में चयन हो गया और वे प्रशिक्षण के लिए मुम्बई चले गए। पत्रकारिता का प्रशिक्षण पूर्ण होने के बाद वे दिल्ली आ गए और 'दिनमान' में उपसम्पादक के पद पर कार्यरत हो गए।

महेश्वर जी पत्रकार थे और उनकी पत्नी समाज-सेविका। बहुत-से पत्रकार राजनैतिक नेता के रूप में प्रख्यात हुए हैं। लेकिन राजनीति में प्रवेश करने के बाद वे रूपान्तरित हो जाते हैं। लेकिन राजनैतिक नेता और पत्रकार का जो कठिन रिश्ता है उसको निभाना टेढ़ी खीर है। स्वभाव-भिन्नता के कारण उनमें टकराव की संभावना सदैव सिर उठाये रहती है; किंतु उमा और महेश्वर के बीच का संबंध ऐसा था जैसे वे एक दूसरे के लिए ही बने थे। महेश्वर जी तीन आयामों में विभक्त थे - राजनीति, पत्रकारिता तथा कुटुम्ब। कुटुम्ब उनका सम्मिलित कर्म-क्षेत्र था और दूसरे दोनों गौण। 1 जनवरी, 2012 को उमा जी को चाय पिलाकर वे सदा के लिए चले गए। 'अनायासेन मरणं बिना दैन्येन जीवितम्' यह संस्कृत लोकोक्ति उन पर शत-प्रतिशत चरितार्थ होती है।

पत्रकारिता जगत् में महेश्वर जी अमर हो गए। उनकी जीवन-साधना अनुकरणीय है। हिन्दी भाषा की शुद्धता के लिए पत्रकारिता के माध्यम से निरंतर संघर्ष करने वाले जागरूक हिन्दी-सेवी महेश्वर जी का योगदान अतुलनीय एवं अविस्मरणीय है।

महिला लेखन : दिशा व दृष्टि

❒ ओम प्रकाश शर्मा

सामान्य अर्थ में 'महिला लेखन' शब्द से तीन तरह के भाव प्रकट होते हैं, पहला, महिलाओं द्वारा लेखन, दूसरा, महिलाओं के बारे में लेखन और तीसरा, महिलाओं के लिए लेखन।

महिलाओं द्वारा लेखन

यदि महिला-साहित्यकारों द्वारा लिखित किसी भी साहित्यिक कृति को महिला लेखन मान लिया जाए तो मीरा, महादेवी, सुभद्रा कुमारी चौहान के लेखन को भी महिला लेखन मानने से परहेज नहीं होना चाहिए। यह भी विदित है कि महिलाओं के लेखन का अधिकांश महिला विषयों पर ही केंद्रित रहता है, जिसके कारण इस लेखन पर सीमित दायरे में रचनाओं को बाँधने का आरोप भी लगता है। इस तथ्य को स्वीकार करती हुई हिंदी लेखिका सूर्यबाला लिखती हैं, 'अनुभव तो यही कहता है कि लेखिकाओं के क्षेत्र अधिकतर घर और नारी मन रहा है, जबकि पुरुष लेखन का घर-बाहर दोनों, लेकिन हम इस क्षति की पूर्ति भी तो कर लेती हैं नारी मन की अथाह गहराइयों में पैठकर। और इतना तो मैं भी दावे के साथ कह सकती हूँ कि नारी के अंदर इतने गूढ़ तिलस्म गुफाएँ और प्राचीर हैं कि इन्हें भेद पाना आसान नहीं जितनी सत्यता और ईमानदारी से नारी भेद सकती है, पुरुष नहीं।' वास्तव में कौन लिख रहा है और किस विषय पर लिख रहा है- दोनों के समन्वय से ही लेखन का विशिष्ट खाँचा मान्य होगा, अन्यथा पुरुष-साहित्यकारों द्वारा महिला विषयों पर सशक्त लेखन को महिला लेखन के अंतर्गत शामिल न करना उतना ही अवैज्ञानिक है, जितना लेखिकाओं द्वारा लिखित किसी भी रचना को महिला लेखन कहना। अपने यहाँ व्यावहारिक रूप में ऐसा माना जाता है कि दलित साहित्य वही है जिसका लेखक भी दलित हो और विषय भी दलित जीवन से संबंधित हो, वैसे ही महिला लेखन के लिए यह माना जाने लगा है कि महिला लेखिका द्वारा महिला केंद्रित लेखन ही महिला लेखन सामान्य अर्थ में माना जाएगा। यों आजकल नारीवादी लेखन का जो विशेष ढर्रा चला है, उसका मूल पश्चिम के नारीवादी चिंतन और उत्तर आधुनिकता के दर्शन पर आधारित है। इसके अनुसार किसी भी महिला का लेखन महिलावादी नहीं कहा जा सकता। महिलावादी लेखन करने के लिए विशेष दक्षता अर्जित करने की जरूरत होती है। स्त्री लेखक को निरंतर अपने महिलापन के प्रति सजग रहना पड़ता है, लिंगभेदी महिला लेखन में लेखिका स्वयं को

भुलाकर या घुलाकर दूसरे की अंतवृत्तियों से साक्षात्कार कराने वाली यानी परकाया प्रवेश वाली मान्यता के विपरीत अपने आपको लेखन के माध्यम से पाती है और यह पाना ही व्यक्त होना है। यहाँ अपनी व्यक्तिगत-जातिगत सीमाओं की स्पष्ट स्वीकृति प्रबल है। इनका विस्तार नहीं, इनके भीतर की गहराई तक पहुँचने की चाहत है। इसलिए इस समय स्त्री के लेखन की भी कई कोटियाँ निर्धारित की जा रही हैं। हंस का 'अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य' वाला विशेषांक स्त्री के लेखन की तीन कोटियाँ बताता है स्त्रियोचित अथवा स्त्रैण लेखन, स्त्रीवादी लेखन तथा लेखक स्त्री का लेखन। यदि गहराई से देखा जाए तो कमोबेश ये तीनों कोटियाँ महिला लेखन में सम्मिलित है। हिन्दी साहित्य में अलग व स्वतंत्र महिला लेखन की विशिष्ट संवेदना तथा प्रवृत्तियों की आगे चर्चा की जाएगी, जिसके कारण एक विशिष्ट खाँचे के रूप में इसे मान्यता दी जाती है, कुछ विशिष्टताओं के कारण इसे समग्र साहित्य से अलगाया जाता है। यहाँ इतना कहना पर्याप्त है कि एक स्त्री के दृष्टिकोण से देखा गया स्त्री का, स्त्री केंद्रित लेखन ही महिला लेखन है।

> **महिलाओं के लिए लेखन कई रूपों में सामने आता रहा है। कुछ महिला साहित्य में स्त्रियों को परंपरागत नारी गुणों से परिपूर्ण करने का प्रयास मिलता है, तो कुछ में आज के समसामयिक आधुनिक बोध से संपन्न होने की कोशिश दिखाई देती है। आजकल कहीं परंपरागत स्त्रीत्व का मंडित रूप प्रस्तुत है, तो कहीं स्त्रीत्व की खंडित अभिव्यक्ति भी प्रस्तुत हो रही है। कुल मिलाकर स्त्री लेखन का मुख्य ध्येय यही है कि कैसे दुनिया की आधी आबादी को अपनी यथार्थ स्थिति का भान कराया जाए और परंपरागत बुराइयों और आयातित दुष्प्रवृत्तियों से मुक्ति दिलाई जाए। इस लक्ष्य को लेकर चला लेखन एक प्रकार का महिला लेखन है ही।**

महिलाओं के बारे में लेखन

महिलाएँ तो अपने बारे में स्वाभाविक रूप से लिखती हैं, जबकि पुरुष-साहित्यकारों के लिए भी अनेक रूपों वाली नारी रहस्य और जिज्ञासा का कारण रही है। इसलिए कवियों एवं लेखकों ने अन्य विषयों के अतिरिक्त अपने लेखन के द्वारा सशक्त नारी पात्रों के माध्यम से प्रखर नारी चेतना की अभिव्यक्ति की है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार, 'यह विचित्र बात है कि स्त्री जब साहित्य लिखती है तब स्त्रियों के बारे में ही लिखती है और पुरुष जब साहित्य लिखता है, तब भी स्त्रियों के संबंध में ही लिखता है। दोनों में अंतर यह होता है कि स्त्री के लिखने का उद्देश्य है अपने विषय में फैले हुए भ्रम का निराकरण और पुरुष का उद्देश्य है उसके विषय में और भी भ्रम पैदा करना।' स्पष्ट है कि महिलाओं के बारे में महिला-साहित्यकारों एवं पुरुष-साहित्यकारों द्वारा पर्याप्त लेखन हुआ है; परंतु महिला लेखन के अंतर्गत हम महिलाओं द्वारा महिला के बारे में लिखे गए साहित्य को ही शामिल करते हैं, पुरुष साहित्यकारों द्वारा महिलाओं के बारे में लिखे साहित्य को नहीं, क्योंकि महिलाओं द्वारा रचित साहित्य को ही प्रामाणिकता व विश्वसनीयता प्राप्त है। स्त्री नियति से जुड़े जीवन यथार्थ को सिर्फ वही भोगती है, अतः इस स्वानुभूत सच्चाई में अप्रतिम विश्वसनीयता विद्यमान होती है।

महादेवी वर्मा ने भी माना है कि 'पुरुष के द्वारा नारी का चरित्र अधिक आदर्श बन सकता है, परंतु अधिक सत्य नहीं, विकृति के अधिक निकट पहुँच सकता हैऋ परंतु यथार्थ के अधिक समीप नहीं। पुरुष के लिए नारीत्व कल्पना हैऋ परंतु नारी के लिए अनुभव। अपने जीवन का जैसा सजीव चित्र वह हमें दे सकेगी, वैसा पुरुष बहुत साधना के उपरांत भी शायद ही दे सके।' इस प्रकार इन प्रसिद्ध विदुषियों ने पुरुषों द्वारा नारी मन की गहराइयों तक न पहुँच पाने को स्वाभाविक माना है। प्रसिद्ध कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान की भी यही राय है, 'स्त्रियों के सहयोग के बिना मानव साहित्य संपूर्ण नहीं हो सकता। एक पुरुष किसी पुरुष की हृदयानुभूति को सफलतापूर्वक प्रकट करता है। परंतु जब वह स्त्रियों की अनुभूति को प्रकट करने जाता है तब उसे विवश होकर कल्पना से ही काम लेना पड़ता है।' इसी आधार पर दलित लेखन का अलग अस्तित्व स्वीकार किया जाने लगा है। चूँकि दलित होने के कारण भोगे अछूतपन के दंश को, स्त्री होने के कारण प्राप्त दोयम दर्जे वाली स्थिति को दलितों और नारियों ने भोगा है, अतः अपने बारे में वही सही बता सकते हैं। यदि कोई दूसरा इनके बारे में कहता है तो वह वास्तव में देखे-सुने अनुभवों को ही व्यक्त करता है। फलतः वह करुणा, सहानुभूति, मार्गदर्शन से युक्त ही लेखन कर पाता है, जबकि स्त्री या दलित का लेखन आक्रोश, नकार और विद्रोह से पूर्ण होता है। यद्यपि यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि क्या स्त्री या दलित अपने बारे में सहानुभूति नहीं जगाते, क्योंकि अंततः साहित्य सहानुभूति ही तो जगाता है। इस प्रकार महिला लेखन से पुरुषों की महिला केंद्रित रचनाओं को स्वानुभूत सत्य के अभाव के कारण अलग रखा जाता है।

महिलाओं के लिए लेखन

इसे स्त्रियोचित लेखन भी कहा जा सकता है। सामान्यतः नारी अपने बारे में लिखना तथा पढ़ना पसंद करती है। महिलाओं की इस विशेषता की ओर संकेत करते हुए फ्रांसीसी लेखिका सीमोन द बोउवार ने कहा है कि स्त्री अपने से बेहद प्यार करती है, इसीलिए अपना विश्लेषण करने से डरती है। शब्दों को केवल अपनी भावनाओं का प्रकाशन भर मान बैठती है। अपने आपको न भूल पाना स्त्री की सबसे बड़ी कमजोरी है। इसके अतिरिक्त उसकी रुचि केवल आत्म में ही रहती है, जिसे वह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और कभी-कभी अनुपम भी मानती है। साधारण विषयों पर बात करते वक्त लेखिका अपने बारे में बात करने से नहीं चुकती। इस तरह व्यावहारिक रूप में महिलाओं का लेखन महिलाओं के बारे में ही होता है जिसे अपेक्षाकृत महिलाएँ ही अधिक पढ़ती हैं।

महिलाओं के लिए लेखन कई रूपों में सामने आता रहा है। कुछ महिला साहित्य में स्त्रियों को परंपरागत नारी गुणों से परिपूर्ण

करने का प्रयास मिलता है, तो कुछ में आज के समसामयिक आधुनिक बोध से संपन्न होने की कोशिश दिखाई देती है। आजकल कहीं परंपरागत स्त्रीत्व का मंडित रूप प्रस्तुत है, तो कहीं स्त्रीत्व की खंडित अभिव्यक्ति भी प्रस्तुत हो रही है। कुल मिलाकर स्त्री लेखन का मुख्य ध्येय यही है कि कैसे दुनिया की आधी आबादी को अपनी यथार्थ स्थिति का भान कराया जाए और परंपरागत बुराइयों और आयातित दुष्प्रवृत्तियों से मुक्ति दिलाई जाए। इस लक्ष्य को लेकर चला लेखन एक प्रकार का महिला लेखन है ही।

हिंदी पत्रकारिता में महिला विषयक सामग्री का विशेष प्रकाशन होने लगा है। 'वामा', 'गृहशोभा', 'सरिता', 'मानुषी', 'सबला', 'मनोरमा', 'जननी', 'नारी उद्घोष', 'समाज कल्याण' आदि पत्रिकाएँ महिला विषयों को केन्द्र में रखकर आगे बढ़ी हैं, वहीं अन्य पत्र-पत्रिकाओं में महिलाओं के लिए विशेष स्तंभ व सामग्री निश्चित की गई है तथा समय-समय पर स्त्री केंद्रित विशेषांक निकलते रहते हैं। लेकिन इनमें से कुछ पत्रिकाएँ नारी के सौंदर्य, पारिवारिक संबंध, रसोई, पहनावा, शौक आदि के बारे में बताती है। अतः यह लेखन नारी के बारे में होकर भी परंपरा और आधुनिकता के कुछ खास बिंदुओं तक सीमित है। इसके साथ स्त्री को सशक्त बनाने वाले अनेक प्रयास भी दिखाई देते हैं।

अतः कहा जा सकता है कि साधारण अर्थ में महिला-साहित्यकारों द्वारा लिखित साहित्य महिला लेखन है। यह महिला विषयों पर केंद्रित होता है तथा इसकी ज्यादातर पाठिका भी महिलाएँ ही होती हैं। ऐसा लेखन घर, परिवार, कुटुम्ब, नाते-रिश्ते तक सीमित रहा है, क्योंकि महिलाओं का अनुभव इन्हीं जगहों तक सिमटा रहा है। यह महिला सबलीकारण एवं समाजीकरण का एक प्रबल माध्यम है जिसकी एक बौद्धिक उड़ान पश्चिम की नारीवादी विमर्शों से भी जुड़ती है।

स्वातंत्र्योत्तर महिला साहित्य

आज के समय और समाज की चुनौतियों, अंतर्विरोधों, विसंगतियों, विद्रूपताओं और यंत्रणाओं को व्यक्त करने में कथा-साहित्य अत्यधिक सक्षम साबित हुआ है। जीवन की विविधतामयी जटिलताओं को अभिव्यक्त करने के कारण कहानियों और उपन्यासों का स्वरूप भी बदलता रहा है। वस्तु व रूप को लेकर नित्य नये प्रयोग होते रहे हैं। जीवन की गतिशीलता व विकासशीलता को पकड़ने की भरपूर शक्ति इसमें निहित है, क्योंकि यह समयधर्मी विधा है। पिछले बीस-पचीस वर्षों से हिन्दी साहित्य में बदलाव दृष्टिगत होते हैं, जीवन-मूल्यों का क्षरण, दुःख, निराशा, हताशा, अकेलापन, असंयम, आक्रोश, क्षोभ, असंतोष, अनास्था आदि के स्वरों को सुना जा सकता है।

पिछले डेढ़ सौ साल में आधुनिक हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ निरंतर बदलती रही हैं, साथ ही रूपगत व विधागत वैविध्य भी सामने आया है। परंतु मोटे तौर पर स्वतंत्रता से पूर्व का हिंदी साहित्य जनजागरण व राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना का साहित्य है, जबकि स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य में वैयक्तिक-सामाजिक जीवन की भीतरी-बाहरी समस्याओं का अंकन और नैतिकता के नये मापदंडों को विकसित करने का प्रयास है, जीवन की जटिलताओं-विविधताओं का निरूपण ही इसका काम्य रहा है। काव्य में आजादी के बाद प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नयी कविता, अकविता आदि की चर्चा हुई है, तो कथा-साहित्य में नयी कहानी, अकहानी, सचेतन कहानी, अचेतन कहानी आदि का विचार आया है। लेकिन आजादी के बाद से कविता का स्थान धीरे-धीरे गौण होता गया। लंबे समय तक साहित्य में वर्चस्व रखने के बाद इसका स्थान अब कथा-साहित्य ने ले लिया है। आज के समय और समाज की चुनौतियों, अंतर्विरोधों, विसंगतियों, विद्रूपताओं और यंत्रणाओं को व्यक्त करने में कथा-साहित्य अत्यधिक सक्षम साबित हुआ है। जीवन की विविधतामयी जटिलताओं को अभिव्यक्त करने के कारण कहानियों और उपन्यासों का स्वरूप भी बदलता रहा है। वस्तु व रूप को लेकर नित्य नये प्रयोग होते रहे हैं। जीवन की गतिशीलता व विकासशीलता को पकड़ने की भरपूर शक्ति इसमें निहित है, क्योंकि यह समयधर्मी विधा है। पिछले बीस-पचीस वर्षों से हिन्दी साहित्य में बदलाव दृष्टिगत होते हैं, जीवन-मूल्यों का क्षरण, दुःख, निराशा, हताशा, अकेलापन, असंयम, आक्रोश, क्षोभ, असंतोष, अनास्था आदि के स्वरों को सुना जा सकता है।

हिन्दी में महिला साहित्यकारों की परंपर समृद्ध है। मीराबाई की भक्ति भावना, महादेवी की आध्यात्मिक चेतना एवं सुभद्रा कुमारी चौहान की राष्ट्रीय भावना संपूर्ण हिंदी साहित्य की युगीन चेतना की सहयात्री रही है।

स्वतंत्रता-पूर्व लेखिकाओं में शिवरानी देवी, उषादेवी मित्रा, होमवती देवी, कमला चौधरी, रामेश्वरी देवी चकोरी, सुमित्रा कुमारी सिन्हा आदि प्रमुख हैं। परंपरागत नारी छवि को आदर्श रूप देना, पारिवारिक कर्त्तव्यों के निर्वाह की प्रेरणा देना, मातृत्व और नारीत्व की महत्ता

को प्रतिपादित करना ही इनका ध्येय रहा है। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में चन्द्रकिरण सोनरिक्सा, उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, रजनी पन्निकर आदि की रचनाओं में नारी के सामाजिक संबंधों की जगह वैयक्तिकता को अधिक स्थान मिला है। समकालीन साहित्य जगत में कई पूर्ववर्ती लेखिकाएँ रचना कर रही हैं, वहीं नई कवयित्रियों और लेखिकाओं की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई है। ममता कालिया, कृष्णा अग्निहोत्री, चित्रा मुद्गल, मणिका मोहिनी, मृदुला सिंहा, मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा, मंजुल भगत, मृणाल पांडेय, नासिरा शर्मा, दीप्ति खंडेलवाल, कुसुम अंसल, इन्दु जैन, सुनीता जैन आदि अनेक महिला-साहित्यकार हैं जिन्होंने नारी जीवन से जुड़े स्थूल समस्याओं की जगह मनोवैज्ञानिक भावनाओं को समझने-समझाने का प्रयास किया है। नारी होने के नाते नारी मन की गहराइयों का अंकन इनकी रचनाओं में दृष्टिगत होता है।

स्वतंत्रता-पूर्व महिला-साहित्यकारों के लिए कलम पकड़ना एक तरह का साहस होता था। इसलिए उनके नारी सुलभ भावना प्रधान लेखन में परंपरागत उदात्त चरित्र और मूल्यों की वकालत है। पारंपरिक नारीत्व के भावों- सतीत्व, पत्नीत्व, मातृत्व को ही अपना अस्तित्वबोध मानती रही है, जबकि समकालीन रचना परिदृश्य में नारी चेतना आत्मबोध से संपन्न परजीवी नहीं, स्त्रीत्व की पहचान उनके संघर्ष के मूल में है, प्रतिवाद उसकी धार है।' सन् 1970 ई. के बाद समाज में नारी की साक्षरता, शिक्षा व चेतना में फैलाव की वजह से सामाजिक दृष्टिकोण में भी बदलाव आया है। महिलाएँ पहले से अधिक निर्भीक, स्वावलंबी, अधिकार-चेता, अस्मिता व अस्तित्व के प्रति सजग व संवेदनशील दिखाई देती हैं। एक ओर शिक्षा, नौकरी, जीवन मूल्यों में बदलाव की स्थिति है, तो दूसरी ओर परंपरागत संस्कार हैं। संक्रमण की स्थिति में महिलाएँ अधिक दुविधाग्रस्त व असुरक्षित हो गयी हैं। फिर भी तेजी से तथाकथित पुरुष-क्षेत्रों में उनकी हिस्सेदारी बढ़ रही है। गंभीर-दुरूह व कष्टसाध्य कार्यों में इनकी दिलचस्पी बढ़ी है। पत्रकारिता और साहित्य में भी महिला-उत्थान के प्रति नयी-नयी सोच प्रकट हुई है। पिछले एक दशक से महिलाओं में उन्मुक्तता, प्रखरता, परिपक्वता आई है, अपनी सीमाओं का निर्धारण वे स्वयं करने के लिए तत्पर हैं, जिससे एक नए चिंतन का आधार बना है। विषमता से उत्पन्न उत्पीड़न के विरूद्ध नारी चेतना के लिए परंपरागत मूल्यों लज्जाशीलता, संकोचशीलता आदि गुणों से पृथक प्रतिवाद की नई जमीन तैयार हुई है। समकालीन भारतीय समाज में नारी चेतना निरंतर अघोषित आंदोलन के रूप में विकासमान है।

समकालीन महिला लेखन स्त्री के आत्मविश्वास को जगाकर व्यक्तित्व निर्माण का लक्ष्य लेकर सामने आता है। दाम्पत्य के बदलते मानदंड, पारिवारिक मूल्यों में बदलाव, निजी व्यक्तित्व की तलाश, दुविधाग्रस्तता, विद्रोही वृत्ति, विवाहेतर व विवाह-पूर्व संबंधों की नयी व्याख्या, घर-बाहर की दोहरी जिम्मेदारी, पुरुष की शंकालु कुदृष्टि, स्त्रीत्व की नई परिभाषा, स्त्री नियति को नकारने का स्वर आदि तत्त्वों से हिंदी महिला लेखन का स्वरूप निर्धारित हुआ है। इसमें नारी जीवन का यथार्थ भिन्न-भिन्न कोणों से प्रस्तुत हुआ है। एक ओर नारी की बात नारी की दृष्टि से अनुभव की सच्चाई के आधार पर प्रस्तुत की गई है तो दूसरी ओर यह 'लेखन सिर्फ उसके लिए स्व-अनुभूत को सामने लाने का ही नहीं, अपनी निजी और जातीय पहचान को टटोलने का भी जरिया बनता चला गया है।' कुल मिलाकर आज के महिला लेखन में साहित्यिक प्रवृत्तियों पर आग्रह कम, स्वानुभूति के प्रति कटिबद्धता अधिक व्यक्त हुई है, जहाँ महिला चिंतन परंपरागत संस्कारबद्धता और आधुनिक स्वतंत्रता की चाहत में द्वंद्वग्रस्त होकर प्रकट हुआ है। फिर भी महिला लेखन और महिला समस्याओं में एक गहरा व प्रामाणिक रिश्ता सामने आता है। इसी कारण इस लेखन को विश्वसनीयता भी प्राप्त है।

कथा-साहित्य की केंद्रीयता

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद धीरे-धीरे कविता की जगह कथा-साहित्य का वर्चस्व स्थापित होता गया। पिछले पच्चीस-तीस वर्षों से कहानियों और उपन्यासों में जीवन की जटिल अनुभूतियों व विविधतापूर्ण अनुभवों का चित्रण होते रहने के कारण परिवर्तन और प्रयोग होते रहे हैं। महिला लेखन के संदर्भ में भी यही कथा-साहित्य की केंद्रीयता वाली प्रवृत्ति विद्यमान रही है, बल्कि यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि समकालीन महिला लेखन की पहचान कथा-साहित्य के माध्यम से ही बनी है। इसका अर्थ यह नहीं है कि कविता, नाटक आदि में नारी चेतना की प्रखर अभिव्यक्ति नहीं हुई है या फिर महिला साहित्यकारों ने इन विधाओं में सफलता अर्जित नहीं की है। वर्तमान महिला लेखन का स्वरूप व पहचान जिन विशेष बिंदुओं व प्रवृत्तियों के कारण बनी है, उसका सार्थक-सफल चित्रण कहानियों-उपन्यासों में ही अधिक हुआ है। संभवतः ये विधाएँ ही स्त्री मन के वर्तमान जटिल बोध को प्रकट करने में ज्यादा समर्थ हैं।

अरविन्द मोहन के अनुसार, 'भारत ही नहीं, विश्व भर में महिलाओं की स्थितियों का निर्धारण दो पैमानों पर होता है आर्थिक और सेक्स से संबंधित और इन दोनों में औरत की स्थिति सदा से कमजोर रही है। दोनों में पुरुष की सत्ता है और उन्हीं का फैसला चलता है। चाहे-अनचाहे महिला लेखन इन्हीं दो बातों में बँधा नजर आता है और जब तक उनमें महादेवी या सुभद्रा कुमारी चौहान का लेखन बना रहता है, उसे महिला वाले खेमे का मानने में परेशानी होती है, और जब लेखन या लेखन में आए पात्र इन दो दायरों को तोड़ते या चुनौती देते हैं, तो विशुद्ध महिलावादी बनता है।'

इस सच्चाई को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि वर्तमान हिन्दी महिला लेखन के ये दोनों-अर्थ और काम-प्रमुख बिन्दु हैं। इन्हीं दोनों के इर्द-गिर्द पूरा महिला लेखन घूमता रहा है। चूँकि कथा-साहित्य जीवन के विविधानुभवों को समेट कर वस्तुनिष्ठ चित्रण में सक्षम होता है, अतः धन और सेक्स को भी चित्रित करने में वह असफल नहीं हो सकता, जबकि 'कविता की नाजुक जमीन प्रेम-काम जैसी चीजों को तो सँभाल लेती है, पर बहुत ही निजी अनुभवों या तीव्र संवेदनाओं वाली इस विधा में आर्थिक स्थिति और सेक्स वाली बातों के ठोस जमीनी यथार्थ को समेटना जरा जटिल काम है और अचरज नहीं कि महिलाओं का कविता लेखन बहुत सीमित रहा है। उपन्यास-कहानी का क्षेत्र ज्यादा समृद्ध है। आर्थिक और सेक्स संबंधी शोषण, उस पीड़ा की अभिव्यक्ति और उससे मुक्ति की चाह औरत कथाकारों का प्रिय और परिचित क्षेत्र है। पर कहीं-न-कहीं सीमाबद्ध है

तथा एक समय के बाद उसके लेखन में यह सब दोहराया जाने लगता है।'

यह अलग प्रश्न है कि क्या किसी भी साहित्य को भले ही वह महिला लेखन ही क्यों न हो, इन्हीं दो बिंदुओं से निर्धारित होना चाहिए? क्या नारी जीवन की संपूर्णता अर्थ और काम के भोग में ही निहित है? क्या इन दोनों से इतर जीवन-जगत का कोई व्यापक क्षेत्र नहीं है? सब जानते हैं कि जीवन-साहित्य की पूर्णता विविधानुभवों व बहुआयामी कर्तृत्वों के समन्वय में निहित है, पर यह यूटोपिया या साहित्य का उद्देश्य हो सकता है खासकर कथा-साहित्य के संदर्भ में, परंतु वास्तविकता यही है कि महिला लेखन इन दो ध्रुवों पर घूमता रहा है। इसके लिए इसकी कड़ी आलोचना भी की जाती है।

डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल के अनुसार, 'हिन्दी में ऐसी महिला लेखिकाओं की कतार बढ़ी है जो एलीट वर्ग की हैं। जिनके पति बड़े पदों पर हैं और बच्चे नामी पब्लिक स्कूलों में पढ़कर एम. बी.ए. कल्चर गह चुके हैं। सुरक्षित सुविधासंपन्न यही महिलाएँ साहित्य को शौक में बदलकर लिख रही हैं। इसीलिए ज्यादातर की कविता-कहानी में 'सेक्स' एक पूरा विषय है। हर औरत की भूख में अन्य का चक्कर है। एक नया कोकशास्त्र इनके उत्तर-आधुनिक चिंतन में रस-निष्पत्ति पा रहा है। इसलिए पूरा नारीवादी लेखन न कहिए, उसका ज्यादातर हिस्सा आनंद का सिद्धावस्था है। इसमें अश्लील, अनैतिक, वीभत्स जैसे शब्दों का अर्थ खोजना व्यर्थ है।'

आजकल यही एलीट वर्ग, ये सुविधासंपन्न लोग, बड़े पदधारी, एम.बी.ए. की डिग्री, पब्लिक स्कूल, फैशन, सेक्स आदि समाज की नियामक शक्तियाँ हैं। जिन लोगों व समाज के पास ये शक्तियाँ नहीं हैं, वे इन्हें पाना चाहते हैं। इसलिए यदि महिला लेखन में ऐसा वर्ग हावी है, तो इसमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए, क्योंकि पढ़े-लिखे सुविधासंपन्न लोग ही हर क्षेत्र में नेतृत्व कर रहे हैं। पूरे साहित्य जगत में भी आजकल यही हो रहा है, फिर केवल महिला लेखन पर ही सवाल क्यों? कुछ वर्ष पूर्व श्री शरद यादव ने महिला आरक्षण विधेयक का विरोध इसलिए संसद में किया था कि उनके अनुसार एलीट वर्ग की बालकटी महिलाएँ ही इस विधेयक से संसद में विराजमान होंगी।

नारीत्व को यौनिकता के धरातल पर परखने वालों की कमी नहीं है। राजेन्द्र यादव नारी और सेक्स की पूरकता सिद्ध करते हुए कहते हैं कि 'दुनिया की शायद ही कोई ईमानदार नारी-कथा हो, जो सेक्स-कथा न हो। जिस समाज में हजारों सालों से नारी को सिर्फ सेक्स-अब्जेक्ट बनाकर रखा गया हो, वहाँ सेक्सविहीन नारी-कथा या तो हवाई आदर्शवाद है या जानबूझकर रचा गया झूठ। पुरुष सेक्स की चर्चा उसकी मर्दानगी या पुरुषार्थ की शौर्यगाथा है, स्त्री सेक्स श्लीलता-अश्लीलता की एक मात्र कसौटी।... यह स्त्री को कमर से ऊपर और नीचे बाँट देने की पुरुष साजिश है , यानी देवी और वेश्या का ध्रुवीकरण।' ऐसा नहीं है कि ऐसे कथनों पर अमल करते हुए महिलाओं ने सिर्फ अर्थ और काम को केंद्र में रखकर ही रचनाएँ की हैं, अपितु मन्नू भंडारी, चित्रा मुद्गल, कृष्णा अग्निहोत्री, मृदुला सिंहा, मंजुल भगत, मैत्रेयी पुष्पा जैसी बहुत-सी लेखिकाएँ हैं जो इन दायरों को तोड़कर निकलने के लिए प्रयासरत हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि कथा-साहित्य से ही महिला लेखन की विशिष्ट पहचान और उसकी अपनी प्रवृत्तियाँ उभरी हैं। यही इसकी प्रवृत्तियों का वाहक है। आलोचना के क्षेत्र में महिलाओं की उपस्थिति नगण्य है, अतः स्त्री केन्द्रित रचनाओं की स्त्रीत्व के विशेष दृष्टिकोण से समीक्षा नहीं हो पाती है। अनामिका, राजी सेठ, मृदुला गर्ग, अर्चना वर्मा आदि ने इस दिशा में पहल की है। फिर भी अभी तक इन्हें नामी पुरुष आलोचकों का मुहताज होना पड़ता है।

राजेन्द्र यादव नारी और सेक्स की पूरकता सिद्ध करते हुए कहते हैं कि 'दुनिया की शायद ही कोई ईमानदार नारी-कथा हो, जो सेक्स-कथा न हो। जिस समाज में हजारों सालों से नारी को सिर्फ सेक्स-अब्जेक्ट बनाकर रखा गया हो? वहाँ सेक्सविहीन नारी-कथा या तो हवाई आदर्शवाद हो या जानबूझकर रचा गया झूठ। पुरुष सेक्स की चर्चा उसकी मर्दानगी या पुरुषार्थ की शौर्यगाथा है, स्त्री सेक्स श्लीलता-अश्लीलता की एक मात्र कसौटी।... यह स्त्री को कमर से ऊपर और नीचे बाँट देने की पुरुष साजिश होना है, यानी देवी और वेश्या का ध्रुवीकरण।'

तुलसी में हैं उपचार के आश्चर्यजनक गुण

❒ रमेश नारायण

तुलसी की चाय बनाने के लिए, तुलसी की ताजी पत्तियाँ लें और धोकर कुचल लें, फिर उसे एक कप पानी में डालें। उसमें पीपरामूल, सौंठ, इलायची पाउडर तथा एक चम्मच चीनी मिला लें। इस मिश्रण को उबालकर बिना छाने सुबह गरमा-गरम पीना चाहिए।

वृक्ष तथा विभिन्न वनस्पतियाँ धरती पर हमारे जीवन के लिए बहुत उपयोगी हैं। भारतीय संस्कृति में भी प्राचीन समय से ही वृक्षों तथा वनस्पतियों को पूजनीय माना जाता रहा है। विभिन्न वनस्पतियाँ हमारे स्वास्थ्य की रक्षा में भी सहायक सिद्ध होती हैं। ऐसा ही एक छोटा परन्तु बहुत महत्वपूर्ण पौधा होता है तुलसी का। हजारों वर्षो से विभिन्न रोगों के इलाज के लिए औषधि के रूप में तुलसी का प्रयोग किया जा रहा है। आयुर्वेद में भी तुलसी तथा उसके विभिन्न औषधीय प्रयोगों का विशेष स्थान है। आंगन में लगे छोटे-से तुलसी के पौधे में अनेक बीमारियों के इलाज करने के आश्चर्यजनक गुण होते हैं। सर्दी के मौसम में खाँसी-जुकाम होना एक आम समस्या है। इनसे बचे रहने का सबसे सरल उपाय है तुलसी की चाय। तुलसी की चाय बनाने के लिए, तुलसी की ताजी पत्तियाँ लें और धोकर कुचल लें, फिर उसे एक कप पानी में डालें। उसमें पीपरामूल, सौंठ, इलायची पाउडर तथा एक चम्मच चीनी मिला लें। इस मिश्रण को उबालकर बिना छाने सुबह गरमा-गरम पीना चाहिए। इस प्रकार की चाय पीने से शरीर में चुस्ती-स्फूर्ति आती है और भूख बढ़ती है।

सर्दी, ज्वर, अरुचि, सुस्ती, दाह, वायु तथा पित्त संबंधी विकारों को दूर करने के लिए भी तुलसी की औषधीय रचना का अपना महत्व है। इसके लिए तुलसी की दस-पन्द्रह ग्राम ताजी धुली पत्तियों को लगभग 150 ग्राम पानी में उबाल लें। जब लगभग आधा या चौथाई पानी ही शेष रह जाए तो उसमें उतनी ही मात्रा में दूध तथा जरूरत के अनुसार मिश्री मिला लें, यह अनेक रोगों को तो दूर करता ही है साथ ही क्षुधावर्द्धक भी होता है। इसी विधि के अनुसार, काढ़ा बनाकर उसमें एक-दो इलायची का चूर्ण और दस-पन्द्रह सुधामूली डालकर सर्दियों में पीना बहुत लाभकारी होता है। इससे शारीरिक पुष्टता बढ़ती है।

तुलसी के पत्ते का चूर्ण बनाकर मर्तबान में रख लें। जब भी चाय बनाएँ तो दस-पन्द्रह ग्राम इस चूर्ण का प्रयोग करें। यह चाय ज्वर, दमा, जुकाम, कफ तथा गले के रोगों के लिए बहुत लाभकारी है। तुलसी का काढ़ा बनाने के लिए तीन-चार काली मिर्च के साथ तुलसी की सात-आठ पत्तियों को रगड़ लें और अच्छी तरह मिलाकर एक गिलास द्रव तैयार करें। इक्कीस दिनों तक सुबह लगातार खाली पेट इस काढ़े का सेवन करने से मस्तिष्क की गर्मी दूर होती है और उसे शक्ति मिलती है।

यह काढ़ा हृदयोत्तेजक होता है इसलिए यह हृदय को पुष्ट करता है और हृदय संबंधी रोगों से बचाव करता है। एसिडिटी, संधिवात, मधुमेह, स्थूलता, खुजली, यौन दुर्बलता, प्रदाह आदि अनेक बीमारियों के उपचार के लिए तुलसी की चटनी बनाई जा सकती है। इसके लिए लगभग दस-दस ग्राम धनिया, पुदिना लें, उसमें थोड़ा सा लहसुन, अदरख, सेंधा नमक, खजूर का गुड़, अंकुरित मेथी, अंकुरित चने, अंकुरित मूंग, तिल और लगभग पांच ग्राम तुलसी के पत्ते मिलाकर महीन पीस लें। अब इसमें एक नींबू का रस और लगभग पन्द्रह ग्राम नारियल की छीन डालें। इस चटनी को रोटी के साथ या साग में मिलाकर खाया जा सकता है। चटनी से कैलशियम, पौटेशियम, गंधक, आयरन, प्रोटीन तथा एन्जाइम आदि हमारे शरीर को प्राप्त होते हैं। एक बात ध्यान रखें, यह चटनी दो घंटे तक ही अच्छी रहती है, अतः इसका प्रयोग सदा ताजा बनाकर ही करें।

शीत ऋतु में तुलसी का पाक भी एक गुणकारी औषधि के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। इसके लिए तुलसी के बीजों को निकाल कर आटे जैसा बारीक पीस लें। लगभग 125 ग्राम चने के आटे में मोयन के लिए देसी घी व थोड़ा सा दूध डालकर उसे लोहे या पीतल की कड़ाही में घी डालकर धीमी आँच पर भुनें। बाद में लगभग 125 ग्राम खोआ डालकर उसे भुनें। इसके बाद उसमें बादाम की गिरि व तुलसी के बीजों का चूर्ण मिला लें। जब लाल हो जाए तो इसमें इलायची व काली मिर्च डालकर इस मिश्रण को तुरंत उतार लें।

सर्दी में प्रतिदिन 20 से 100 ग्राम मात्र दूध के साथ खाने से बल वीर्य बढ़ता है। इससे पेट के रोग, वातजन्य रोग, शीघ्रपतन, कामशीतलता, मस्तिष्क की कमजोरी, पुराना जुकाम, कफ आदि में बहुत लाभ होता है। अरिष्ट आसव बनाने के लिए 100 ग्राम बबूल की छाल को लगभग डेढ़ किलो पानी में तब तक उबालें जब तक कि पानी एक चौथाई न हो जाए। अब इसे छानकर इसमें लगभग अस्सी ग्राम तुलसी का चूर्ण, पाँच सौ ग्राम गुड़, 10 ग्राम पीपल तथा 80 ग्राम आँवले के फूल मिला दें। काली मिर्च, जायफल, दालचीनी, शीतलचीनी, नागकेसर, तमालपत्र तथा छोटी इलायची, प्रत्येक की 10-10 ग्राम मात्रा को कूट पीसकर इसमें मिला दें। प्रतिदिन सुबह इसके एक चम्मच मात्र के सेवन से खाँसी, वीर्यदोष, निर्बलता तथा भूख न लगने जैसी बीमारियाँ दूर हो जाती हैं। आपके आँगन में लगे तुलसी के पौधे का न केवल धार्मिक महत्त्व होता है अपितु यह स्वास्थ्य लाभ भी देता है। किसी इमारत के ऊपरी मंजिल पर रहने वाले लोग आँगन में न सही, गमले में तो तुलसी का पौधा लगा ही सकते हैं।

दिल्ली प्रदेश महिला कांग्रेस

महिला सशक्तीकरण में गिरावट पर चिंता

❐ शादाब शाहिद

आजादी की अंतिम बेला 1941-47 ई. के बीच कांग्रेस ने ऐसी सक्रियता दिखाई थी, जब प्रभात फेरी निकला करती थी। बाद में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की जिला एवं ग्राम शाखाओं में ऐसी ही सक्रियता आई जो हाल तक बनी रही।

आजकल ऐसी सक्रियता दिल्ली की महिला कांग्रेस में दिखा रही है, जिसे संगठन और महिला सशक्तीकरण के संदर्भ से अच्छी शुरुआत कहा जा सकता है।

कहा जा रहा है कि महिलाओं में समाज सेवा के प्रति सक्रियता बढ़ी है। बड़े पैमाने पर दिल्ली नगर निगम के विगत चुनाव में महिलाओं ने जीत दर्ज की है। निगम पार्षद के रूप में महिलाओं की बड़ी संख्या में विजय को महिला जागरण का आधार बना रही हैं, दिल्ली प्रदेश महिला कांग्रेस की अध्यक्ष आभा चौधरी और नवनियुक्त सचिव मलाइका मिराण्डा।

मानव संसाधन मंत्री कपिल सिब्बल ने विगत् 28 जुलाई को अपने आवास तीनमूर्ति मार्ग पर आयोजित कांग्रेस की वरिष्ठ महिला कार्यकर्ताओं की विशेष बैठक में आभा चौधरी, मलाईका मिराण्डा और उपस्थित 23 अन्य महिलाओं को संबोधित करते हुए कहा- 'विदेशी अखबारों में खबरें छप रही हैं कि भारत में महिला सशक्तीकरण के संदर्भ में निरंतर गिरावट आ रही है। यह खबर सच भी हो सकती है और झूठ भी, इसलिए मैं तमाम जागरूक और शिक्षित महिलाओं से अनुरोध करूँगा कि आप सब स्वयं महिला हैं और महिलाओं का दर्द समझती हैं।

कनाडा में हुए सर्वेक्षण के अनुसार भारतीय महिलाएँ सबेरे, शाम दूध-सब्जी के लिए पति, पुत्र अथवा भाई पर निर्भर होती हैं, वह सऊदी अरब जैसे रुढ़िवादी देश से भी ज्यादा कमजोर हैं। वहाँ महिला शिक्षा और शासकीय पदों पर उनकी नियुक्ति आज भी वर्जित है। भारत ऐसे पिछड़े देशों की सूची में 19वें स्थान पर आ गया है।

भारत महिला प्रधान देश है। दुर्गा, सरस्वती और लक्ष्मी की यहाँ पूजा होती है। पूर्व राष्ट्रपति प्रतिभा देवी सिंह पाटिल महिला हैं। इस पृष्ठभूमि को देखते हुए, कम से कम दिल्ली में त्वरित रूप से ऐसे प्रभावी कदम उठाए जाने चाहिए कि घरेलू हिंसा के मामलों में गिरावट आए, दोषी पुरुष वर्ग को सजा मिले और ज्यादा अच्छा हो यदि पुरुष वर्ग महिलाओं के प्रति सम्मान की भावना का आचरण करें। इसके लिए जैसी भी सुरक्षा या विकास सहायता अनिवार्य होगी, सरकार उसपर प्राथमिक रूप से ध्यान देगी।'

'मंगल मिशन' उड़ान की तैयारी में भारत

पल्लव बागला

ऐसे समय जब ओलंपिक जारी है, मंगल ग्रह पर पहुँचने के लिए एशिया में होड़ प्रारंभ होने को है। भारत अगले साल मंगल पर अपना अंतरिक्ष यान भेजने की तैयारी में है। कुछ लोग कह रहे हैं कि ये अंतरिक्ष में पहुँचने के लिए एशिया के मुल्कों के बीच नई प्रतिस्पर्द्धा की शुरुआत होगी।

केंद्रीय कैबिनेट भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के उस प्रस्ताव पर विचार करने वाला है जिसमें मंगल पर एक मानवरहित अंतरिक्ष यान भेजे जाने की बात कही गई है।

एक तरह से इस मिशन के जरिए भारत अपनी तकनीकी क्षमता का फिर से दावा करना चाह रहा है, साथ ही साथ वो उन छह देशों की कतार में भी खड़ा हो जाएगा, जिन्होंने इस जोखिम भरी यात्रा के समर्थन का खतरा उठाया।

चंद्रयान 1

साल 2008 में भारत ने चंद्रमा पर एक मानवरहित यान- चंद्रयान 1 - भेजा था, जिसने इस बात के सबूत इकट्ठा किए थे कि वहाँ पानी मौजूद है। अब भारत मंगल के लिए इसी तरह की योजना लागू करने की प्रक्रिया में है।

भारत का मंगल ग्रह मिशन नवंबर 2013 में श्रीहरिकोटा से लांच किया जा सकता है, जिसके लिए फिर से पीएसएलवी का प्रयोग होगा।

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के अध्यक्ष के. राधाकृष्णन ने बेंगलुरु में कहा है कि संगठन अब पीएसएलवी जैसे रॉकेट और संचार सैटेलाइट की बजाय अग्रणी टेक्नालॉजी विकसित करने पर ध्यान केंद्रित करेगा।

उन्होंने कहा कि रॉकेट निर्माण जैसे क्षेत्र में निजी कंपनियों को लगाया जा सकता है। भारत सरकार ने मंगल ग्रह मिशन के लिए चार करोड़ दस लाख डॉलर आवंटित कर दिए हैं। इस पर 11.2 करोड़ डॉलर खर्च का अनुमान है। कई लोगों ने इस बात के लिए सरकार की निंदा की है। उनका कहना है कि जब इक्कीसवीं सदी का सबसे बड़ा सूखा मुल्क के सामने है और कुछ ही दिनों पहले लगभग आधा देश अंधेरे में डूबा हुआ था।

एक सरकारी अधिकारी ने कहा कि इस तरह के तर्क 1960 से दिए जा रहे हैं कि भारत जैसे गरीब मुल्क को अंतरिक्ष कार्यक्रम की जरूरत नहीं है।

हालाँकि मंगल ग्रह मिशन की पूरी जानकारी फिलहाल उबलब्ध नहीं है, लेकिन भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन से मिले संकेत के मुताबिक इसका लक्ष्य ग्रह पर जीवन, वहाँ की जलवायु, उत्पत्ति, विकास, भूविज्ञान और इस बात का पता लगाना है कि क्या वहाँ जीवन संभव है।

संगठन के एक अधिकारी का कहना है मिशन में इस्तेमाल होने वाली तकनीक से ये साबित हो जाएगा कि भारत मंगल पर भी पहुँचने की क्षमता रखता है।

मंगल पर 42 भेजे गए मिशन में से आधे ही सफल हुए हैं। ये मिशन अमेरिका, रूस, फ्रांस, चीन और कुछ दूसरे यूरोपीय मुल्कों ने भेजे थे।

अमेरिकी अंतरिक्ष यान मार्स साइंस लेबोरेटोरी मंगल पर पहुँच चुका है। इसे ढाई अरब डॉलर की कीमत से तैयार किया गया है। पिछले साल चीन का पहला मंगल मिशन, जिसे यिंगह्यो-1 का नाम दिया गया था, नाकाम हो गया था। कुछ का मानना है कि भारत मंगल पर अपना मिशन पहले भेजकर अपनी बढ़त साबित करना चाहता है।

लघुकथा

क्रिकेट में सट्टाबाजी

❒ नरेन्द्र परिहार

क्रिकेट का बुखार चारों तरफ चढ़ा था। राबिन अपने दोस्त के कहने पर कोची कस्टर्स की जीत पर पैसा लगा रहा था। जीत पर चार हजार रुपये की शर्त। ज्ञानेश्वरी ट्रेन में मुम्बई इलेवन में सचिन के शतक होने पर राबिन ने शर्त को 8000/- करने को कहा। विरोधी जो मराठी अभिज्ञान से भरा था, मान गया, क्योंकि उसका मानना था कि सचिन वर्ल्ड कप थोड़े खेल रहा है, जो टीम उसकी सेंचुरी बनाते ही हार जाएगी।

शनिवार को जब वे दोनों मिले बस वही चर्चा, दोस्त आठ हजार जीतने वाले से पार्टी माँग रहे थे और हारने वाले को सलाह दे रहे थे, सट्टा या शर्त क्यों लगाते हो, याद रखो यह उनका पेशा है और हम खामखाँ लुटते हैं। जाने दो यार, हारने वाला राकेश बोला, हमारा एक दिन तो हँसते-खेलते बीत गया। पैसा राबिन के पास गया है, कल मेरे पास आ जाएगा, क्या सफर में हम ताश यूँ ही नहीं खेलते। कोई हारेगा तो ही कोई जीतेगा।

तभी राबिन की नजर एक खबर पर पड़ी, जिसमें लिखा था दिनशा नाम के व्यक्ति ने अपने परिवार के साथ क्रिकेट के सट्टे में जबरदस्त हार के कारण प्राण त्याग दिए। सच हार-जीत से कोई फर्क नहीं पड़ता। राबिन ने रमेश को कहा, वह पैसे नहीं लेगा और इसके बाद यह हार-जीत का जुआ भी नहीं खेलेगा।

एक दिन जिसने ओलंपिक की तस्वीर बदल दी

म्युनिख में 1972 में हुए ओलंपिक खेलों के दौरान छह फिलीस्तीनी आतंकवादी खेलगाँव में घुस गए थे। इस दौरान उन्होंने इजराइल के दो खिलाड़ियों की हत्या कर दी थी और 9 खिलाड़ियों को बंधक बना लिया था। इस घटना को फिलीस्तीन के ब्लैक सितंबर नाम के संगठन ने अंजाम दिया था। यह पहला मौका था, जब आतंकवादियों ने किसी अंतरराष्ट्रीय खेल स्पर्द्धा को अपना निशाना बनाया था।

यह घटना ओलंपिक के स्वर्णिम अतीत में काले अध्याय के रूप में याद की जाती है। 5 सिंतबर, 1972 के बाद ओलंपिक आयोजन का स्वरूप ही बदल गया। म्युनिख की घटना को छोड़कर ओलंपिक इतिहास में ऐसा कभी नहीं हुआ। 1996 के एथेंस ओलंपिक के पहले एक स्थानीय आतंकवादी ने बम विस्फोट की घटना को अंजाम दिया था। यह म्युनिख के बाद एकमात्र आतंकवादी घटना है, जिसका ओलंपिक आयोजन के संदर्भ में उल्लेख किया जा सकता है।

म्युनिख ओलंपिक के बाद खेलों की सुरक्षा के पुख्ता इंतजाम किए जाने लगे। सुरक्षा ओलंपिक आयोजन का एक मुख्य हिस्सा बन गया। आयोजन के दौरान बड़ी राशि केवल सुरक्षा में ही खर्च होने लगी। जर्मनी ने 1972 में म्युनिख ओलंपिक के दौरान 2 मिलियन डॉलर खर्च किए थे। 1976 में मोंट्रियल ओलंपिक में केवल सुरक्षा में 100 मिलियन डॉलर खर्च किए थे। आज यह खर्च बढ़ता ही जा रहा है। 9.11 और 7.7 की आतंकवादी घटनाओं के बाद सुरक्षा खर्च में और इजाफा हुआ है।

सरकारी आँकड़ों के अनुसार, ब्रिटिश सरकार ने इस बार 850 मिलियन डॉलर खर्च किए हैं। गैर आधिकारिक आँकड़े 1000 मिलियन डॉलर खर्च होने की संभावना जता रहे हैं। लंदन हमेशा से ही राजनीतिक गतिविधियों का केंद्र रहा है। इसलिए यह आतंकवादियों के निशाने पर रहता है। यहाँ 1988 में हुए लॉकरबी बम कांड में 270 लोग मारे गए थे और 2005 में लंदन मेट्रो में हुए आत्मघाती आतंकवादी हमले में 52 लोगों की जान गई थी।

सुरक्षा एजेंसियाँ लंदन ओलंपिक के दौरान हमले की आशंका जता रही हैं। इस बार

आतंकवादी संगठनों का लक्ष्य कोई एक देश नहीं है। उनका लक्ष्य तो पूरे आयोजन को विफल करना है। लंदन को जब 2012 ओलंपिक का मेजबान घोषित किया गया था, उसके अगले ही दिन वहाँ बम धमाके हो गए थे। अब जब ओलंपिक का आयोजन हो रहा है, तब भी आतंकवादी हमलों की तलवार लंदन ओलंपिक पर लटक रही है। इससे निपटने के लिए ब्रिटिश सरकार ने कमर कस ली है। 205 देशों के 12500 एथलीटों की सुरक्षा के लिए 13500 सैनिकों को तैनात कर दिया है।

सैनिकों की यह संख्या अफगानिस्तान भेजे गए ब्रिटिश फौजियों से 4000 ज्यादा है। इसके साथ ही 500 एफबीआई एजेंटों को सुरक्षा की जिम्मेदारी सौंपी गई है। सरकार ने टेम्स नदी पर अपने सबसे बड़े नौसैनिक युद्धपोत को भी तैनात किया है, जिसमें जमीन से हवा में मार करने वाली रैपियर मिसाइलें और आठ लाइनेक्स हैलीकॉप्टर किसी भी परिस्थिति का सामना करने के लिए तैयार हैं। इन सुरक्षा इंतजामों के बावजूद लंदन ओलंपिक में सुरक्षा के लिहाज से किया जाने वाला आज तक का सबसे बड़ा खर्च नहीं है।

यह उपलब्धि चीन के नाम दर्ज है। 2008 में हुए बीजिंग ओलंपिक के दौरान चीनी सरकार ने एक लाख से ज्यादा हथियारबंद सैनिकों को ओलंपिक खेलों की सुरक्षा के लिए तैनात किया था। आयोजकों और प्रशासन ने निगरानी के लिए 3 लाख से अधिक कैमरे लगाए थे। इसके अलावा बड्र्स नेस्ट ओलंपिक स्टेडियम के पास ही एंटी एयरक्राफ्ट मिसाइलें तैनात की थीं, ताकि किसी भी तरह की चूक सुरक्षा में न हो और किसी भी आतंकी हमले का सामना किया जा सकेगा। किसी भी बड़े सुरक्षा खतरे की सूचना देने वाले को 1 लाख से लेकर 5 लाख युआन का पुरस्कार देने की घोषणा की गई थी। लंदन ओलंपिक आयोजन समिति के प्रमुख सबेस्टियन का कहना है कि हम सुरक्षा की दृष्टि से आयोजन को सफल बनाना चाहते हैं, मगर इसके साथ ही हम लोगों को यह संदेश भी नहीं देना चाहते कि वे संगीन के साये में हैं।

शांति और सद्भावना का प्रतीक माना जाने वाला ओलंपिक राजनीतिक मौकापरस्ती के खेल में बदल गया है। 2008 में रूस ने ओलंपिक के उद्घाटन समारोह के दिन ही दक्षिण ओसेटिया के मुद्दे पर जार्जिया पर हमला कर दिया था, जबकि दोनों देशों के खिलाड़ी ओलंपिक सद्भावना के प्रतीक माने जाने वाले ओलंपिक फ्लैग के नीचे आपस में भिड़ रहे थे। ओलंपिक के मायने अब बदल गए हैं। यह अब केवल खिलाड़ियों के बीच की प्रतिद्वंद्विता तक ही सीमित नहीं रह गया है, बल्कि देशों के बीच वर्चस्व दर्शाने का भी एक कारक बन गया है, जो पदक तालिका में दिखाई देता है। ओलंपिक को आपसी वैमनस्य से अलग रखकर ही हम म्युनिख में हुए शहीद खिलाड़ियों को सच्ची श्रद्धांजलि दे सकते हैं। लड़ाई केवल बंदूक और गोलियों से ही नहीं लड़ी जाती है, यह खेलों के जरिए भी ट्रैक और मैदान पर लड़ी और जीती भी जा सकती है।

बिना पानी के कपड़े धुलने वाली मशीन

बिना पानी के भी कपड़े धुल सकते हैं, यह सोचकर ही मन कुलाँचे मारने लगता है; परंतु यह कोई दिवास्वप्न नहीं वरन् यथार्थ होने जा रहा है। ब्रिटेन के आविष्कारकों ने 30 साल की सघन मेहनत के बाद इसे विकसित किया है। यह ईको फ्रेंडली वाशिंग मशीन है, जहाँ पानी की बहुत कम मात्रा के इस्तेमाल से कपड़े धुलेंगे। यह मात्रा न के बराबर होगी। इस मशीन में पानी ही नहीं, डिटर्जेंट पावडर एवं बिजली की भी कम जरूरत पड़ेगी। दक्षिण यार्कशायर की कैटक्लिफ के संस्थान द्वारा इसे निर्मित किया गया है।

विश्व में बढ़ते जल संकट के कारण इस नई तकनीक की प्रबल मांग हो सकती है। इसे बनाने वाली कंपनी ने इससे सलाना करीब पाँच खरब रुपये का व्यापार होने की संभावना जतायी है। उसका दावा है कि इस तकनीक से अरबों लीटर पानी की बचत होगी। इसे खुले बाजार में इस साल के अंत तक लाया सकेगा।

गंगा की तरह अमेजन नदी पर भी कहर बरप रहा है

दक्षिण अमेरिका के उत्तर में बहने वाली अमेजन नदी व इसके तटीय इलाके लगभग 70 लाख वर्ग किलोमीटर में फैले हुए हैं जो अधिकतर ब्राजील और अंशतः गुयाना, सुरीनाम, वेनेजुएला, कोलंबिया, इक्वाडोर, पेरू और बोलीविया आदि में फैले हुए हैं। अमेजन के हरे-भरे सुंदर इलाके प्रकृति के अनुपम उपहार हैं। अमेजन नदी 6400 किलोमीटर लंबी है। अलग-अलग रंगों वाली सहायक नदियों के साथ मिलकर यह दुनिया की सबसे लंबी नदी बन जाती है।

अमेजन के वन में सिर्फ ढेर सारी लकड़ी ही नहीं, बल्कि खनिज भी हैं, जिन्हें निकालने के लिए मशीनों, यंत्रों, रसायनों का उपयोग किया जाता है। यहाँ पाए जाने वाले पेड़-पौधे लगभग 100 अरब टन कार्बन सोखते हैं। इसके जंगलों के खत्म होने से रेड इंडियन्स और अन्य आदिवासियों को भारी नुकसान उठाना पड़ रहा है। यहाँ लगभग 320 अलग-अलग प्रजातियों के आदिवासी हैं। यहाँ पाए जाने वाले जानवरों में जंगुआर भी शामिल है जो अमेरिकी महाद्वीप की सबसे बड़ी जंगली बिल्ली है।

मस्तिष्क की तस्वीर से चलेगा बुद्धि का पता

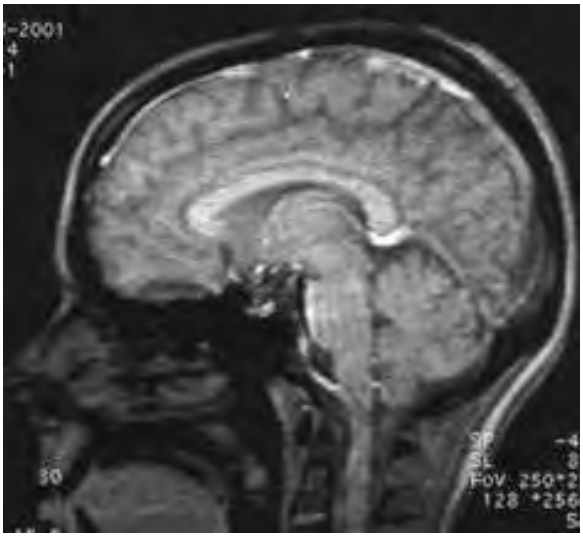

मस्तिष्क की तस्वीर यानी ब्रेन इमेजिंग के जरिए यह समझा जा सकता है कि कौन कितना बुद्धिमान है। सेंट लुई के वाशिंगटन विश्वविद्यालय के अनुसंधानकर्ताओं ने अपने अध्ययन में कहा है कि ज्यादा बुद्धिमान और कम बुद्धिमान लोगों में अंतर को समझने के लिए मस्तिष्क की बनावट अहम है।

विश्वविद्यालय के कॉग्निटिव न्यूरोसाइंस के पोस्टडॉक्टरल रिसर्च फेलो व इस अध्ययन के प्रमुख माइकल डब्ल्यू कोल ने कहा, 'हमारा अध्ययन दिखाता है कि मस्तिष्क के प्री फ्रंटल कॉर्टेक्स के अन्य विशेष भाग के साथ संबंधों के माध्यम से अंदाजा लगाया जा सकता है कि कौन कितना बुद्धिमान है।'

इस अध्ययन के परिणाम 'जर्नल ऑफ न्यूरोसाइंस' में प्रकाशित हुए हैं। इस अनुसंधान ने मानवों की बुद्धिमत्ता को समझने के लिए 'ग्लोबल ब्रेन कनेक्टिविटी' को नई पद्धति के तौर पर स्थापित किया है।